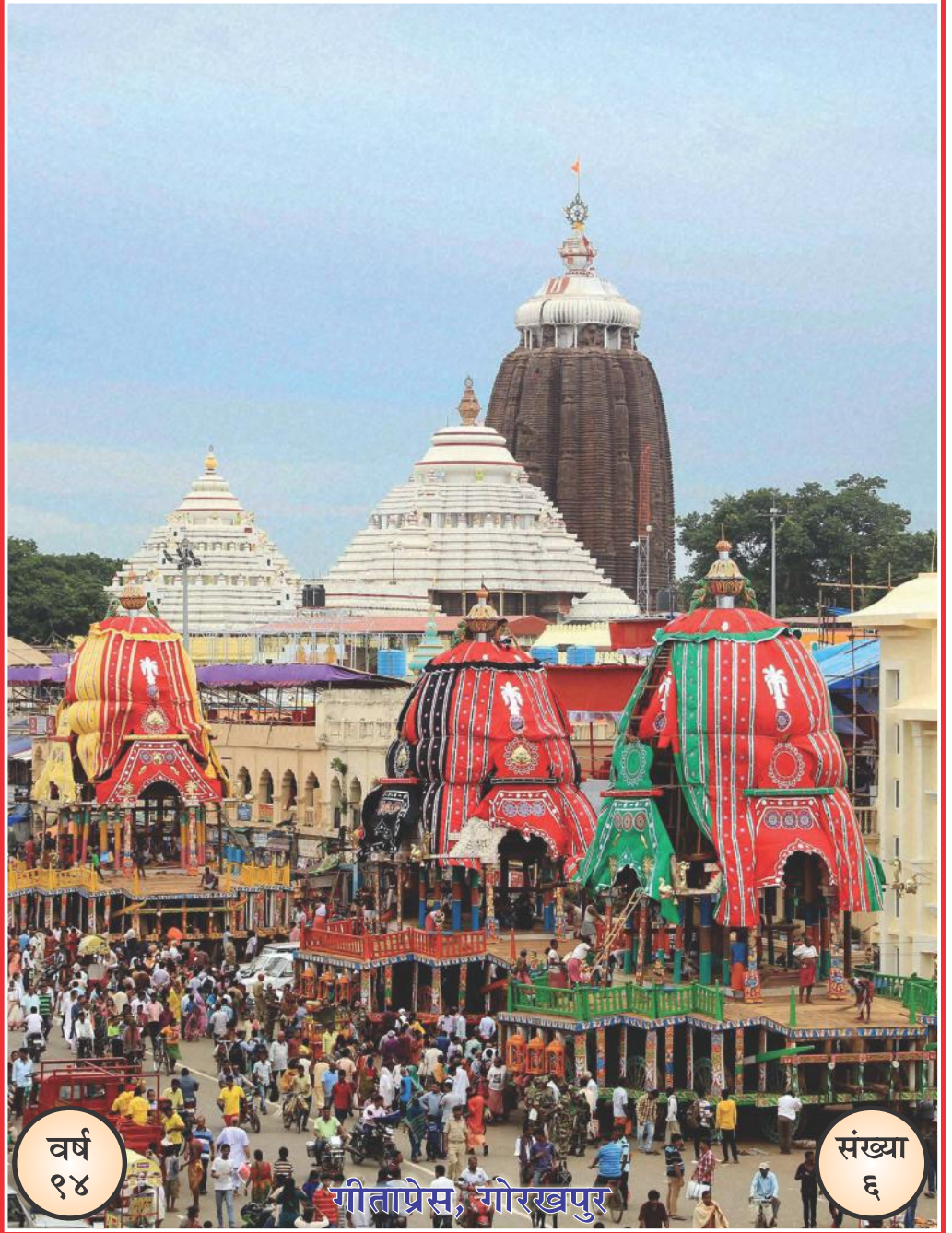


* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
१४

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
६

पुरीधाममें श्रीजगन्नाथजीकी रथयात्रा



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



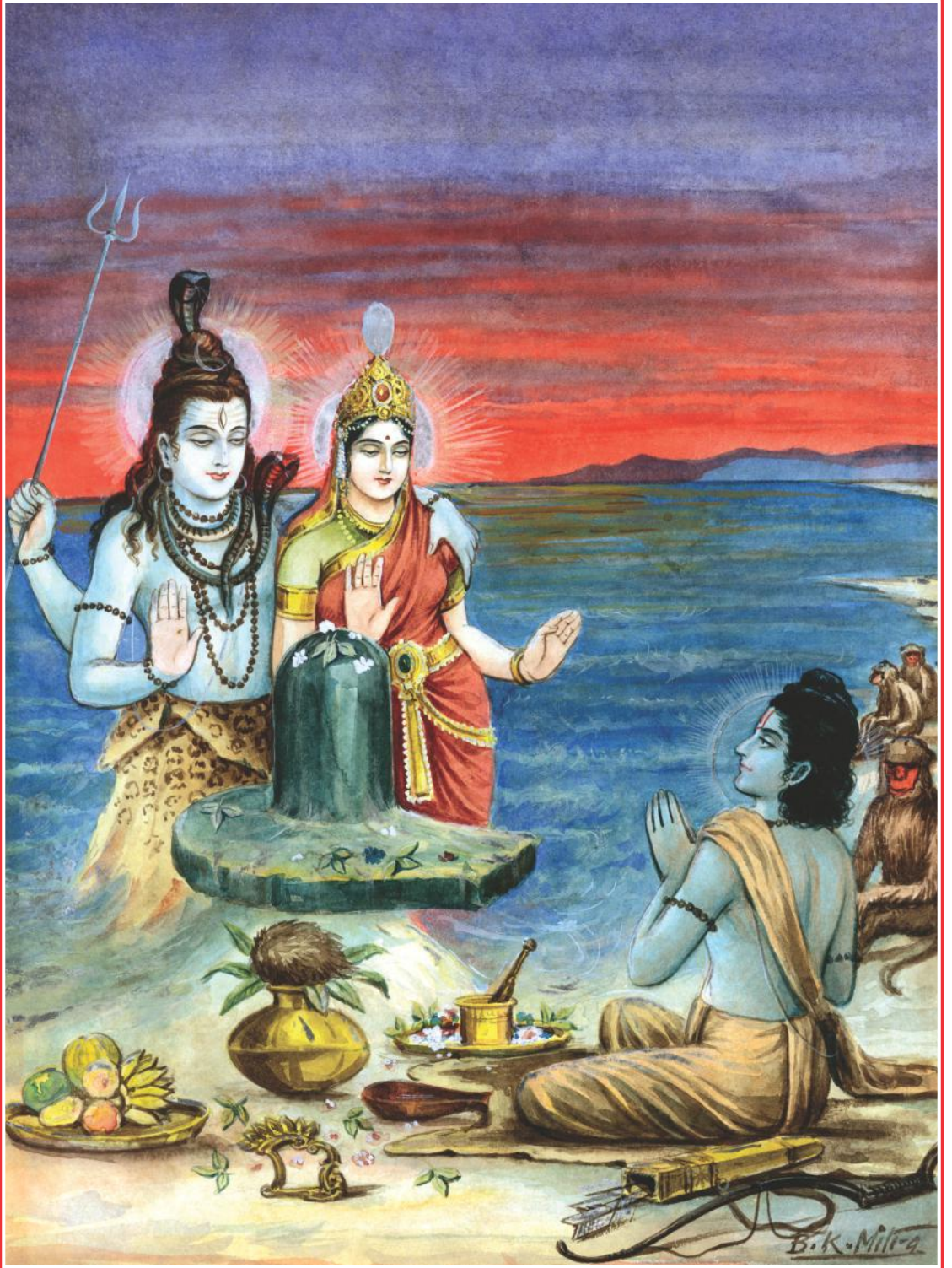
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



KAPWING



भगवान् श्रीरामद्वारा रामेश्वर-पूजन

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



आख्यानकानि भुवि यानि कथाश्च या या यद्यत्प्रमेयमुचितं परिपेलवं वा ।
दृष्टान्तदृष्टिकथनेन तदेति साधो प्राकाशयमाशु भुवनं सितरश्मिनेव ॥

वर्ष
१४

गोरखपुर, सौर आषाढ़, वि० सं० २०७७, श्रीकृष्ण-सं० ५२४६, जून २०२० ई०

संख्या
६

पूर्ण संख्या ११२३

भगवान् श्रीरामद्वारा रामेश्वर-पूजन

लिंगं थापि बिधिवत् करि पूजा । सिव समान प्रिय मोहि न दूजा ॥
सिव द्रोही मम भगत कहावा । सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा ॥
संकर बिमुख भगति चह मोरी । सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥
संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास ।
ते नर करहिं कलष भरि घोर नरक महुँ बास ॥

जे रामेस्वर दरसनु करिहिहिं । ते तनु तजि मम लोक सिधरिहिहिं ॥
जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहि । सो साजुज्य मुक्ति नर पाइहि ॥
होइ अकाम जो छल तजि सेइहि । भगति मोरि तेहि संकर देइहि ॥
मम कृत सेतु जो दरसनु करिही । सो बिनु श्रम भवसागर तरिही ॥

[श्रीरामचरितमानस]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर आषाढ़, वि० सं० २०७७, श्रीकृष्ण-सं० ५२४६, जून २०२० ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- भगवान् श्रीरामद्वारा रामेश्वर-पूजन	३	१६- संकीर्तनसे रोगमुक्ति	
२- कल्याण	५	(वैद्य श्रीबालकृष्णजी गोस्वामी)	३२
३- श्रीपुरुषोत्तमक्षेत्र और श्रीजगन्नाथजी [आवरणचित्र-परिचय] ..	६	१७- संकीर्तनकी महिमा	३३
४- श्रीजगन्नाथाष्टकम्	१०	१८- दोष कैसे दूर हों ?	
५- आध्यात्मिक प्रश्नोत्तर		(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	३४
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	११	१९- सन्त श्रीमुण्डिया स्वामी [संत-चरित]	
६- श्रीगंगा-माहात्म्य	१३	(श्रीरतिभाईजी पुरोहित)	३७
७- 'सतसंगति महिमा नहीं गोई' (स्वामी श्रीअच्युतानन्दजी महाराज)	१४	२०- शुद्धिका अर्थ [स्वामी श्रीजगदेवानन्दजी]	३९
८- जज नीलमाधव बनर्जीकी अनूठी नैतिकता [प्रेरक प्रसंग]	१५	२१- गोसेवाके फलस्वरूप प्राण-रक्षा [गो-चिन्तन]	
९- वाणीका सदुपयोग करें !		(गोकलचंद कासट)	४०
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..	१६	२२- साधनोपयोगी पत्र	४१
१०- भारतीय अध्यात्म-सम्बन्धी श्रीअरविन्दकी चिन्तन-दृष्टि		पति ही स्त्रीका गुरु है	४१
(श्रीहरिश्चन्द्रजी श्रीवास्तव)	१७	२३- ब्रतोत्सव-पर्व [आषाढ़मासके व्रत-पर्व]	४३
११- मॉरीशस और ब्रिटेनमें हिन्दू संस्कृति (श्रीबिन्धाप्रसादजी द्विवेदी) ..	२०	२४- कृपानुभूति [दैवी कृपाका आभास]	४४
१२- गतिशील संसार [साधकों के प्रति]		२५- पढ़ो, समझो और करो	४५
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	२१	(१) अपरिचित रेलकर्मियोंकी सद्भावना	४५
१३- विज्ञान एवं अध्यात्ममें समन्वय अति		(२) त्यागकी महिमा	४६
आवश्यक [प्रेरक प्रसंग] (डॉ० श्रीविश्वामित्रजी)	२३	२६- मनन करने योग्य	४८
१४- जीवन्मुक्त महात्माके लक्षण (डॉ० श्री के०डी० शर्मा)	२४	माता-पिताकी सेवा ही परम धर्म है	४८
१५- महाराज विश्वामित्र-राजर्षिसे ब्रह्मर्षि		२७- कल्याणका आगामी ९५वें वर्ष (सन् २०२१ ई०)-का	
(आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा)	२७	विशेषाङ्क—'श्रीगणेशपुराणाङ्क'	४९

चित्र-सूची

१- पुरीधाममें श्रीजगन्नाथजीकी रथयात्रा	(रंगीन) . आवरण-पृष्ठ	५- सत्यवतीको दो चरु देते ऋचीक	(इकरंगा)	२७
२- भगवान् श्रीरामद्वारा रामेश्वर-पूजन	(")	६- सन्त श्रीमुण्डिया स्वामी	(")	३७
३- पुरीधाममें श्रीजगन्नाथजीकी रथयात्रा	(इकरंगा)	७- धर्मव्याधद्वारा अपने माता-		
४- पुरीधामस्थित श्रीजगन्नाथजीका मन्दिर	(")	पिताकी सेवा	(")	४८

एकवर्षीय शुल्क

₹ २५०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय । सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय ॥
जय जय विश्वरूप हरि जय । जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥
जय विराट् जय जगत्पते । गौरीपति जय रमापते ॥

विदेशमें Air Mail }
शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹ 3,000)
पंचवर्षीय US\$ 250 (₹ 15,000)

{ Us Cheque Collection
{ Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

₹ १२५०

संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक — डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

☎ 09235400242 / 244

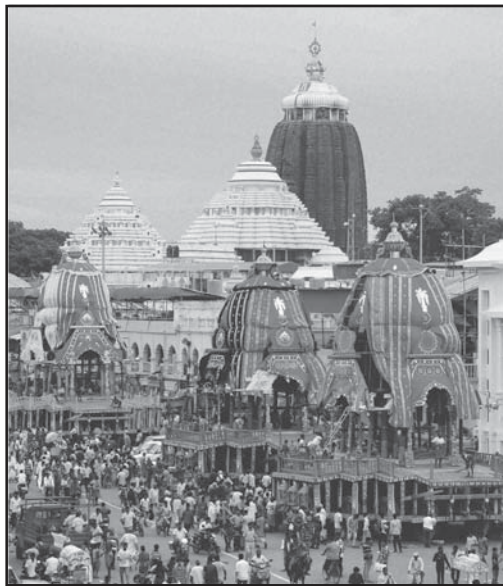
सदस्यता-शुल्क — व्यवस्थापक — 'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस — २७३००५, गोरखपुर को भेजें ।

Online सदस्यता हेतु gitapress.org पर Kalyan या Kalyan Subscription option पर click करें ।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क gitapress.org अथवा book.gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें ।

याद रखो—सारा जगत् भगवान्से निकला है और इसमें सर्वत्र केवल भगवान् ही भरे हैं। भगवान् सर्वथा कल्याणमय—सद्गुणसमुद्र हैं। अतः जगत्में भी सर्वत्र सर्वथा कल्याणमय गुणसमूह ही भरे हैं। तुम्हारी आभ्यन्तरिक आँखें तमोमयी तथा अशुभ दर्शनशीला हैं, इसलिये तुम्हारा मन निरन्तर अशुभका क्रीड़ा-प्रांगण बन रहा है। रात-दिन अशुभके समूह ही उसमें धमाचौकड़ी मचाते रहते हैं। इनको यों ही रहने दो, इनको निकालनेकी बात मत सोचो। बस, लगनके साथ मंगलमय भगवान्की मंगलमयता तथा उनकी सद्गुणावलीको देखना शुरू कर दो। जब उनकी मंगलमयी सद्गुणावलीको हृदयमें स्थान मिल जायगा, तब अशुभ विचार वैसे ही तुरन्त विलीन और नष्ट हो जायँगे, जैसे सूर्योदय होनेपर अन्धकार विलीन और नष्ट हो जाता है। **‘शिव’**

(सप्ताचार्य डॉ० श्रीवासुदेवकृष्णजी चतुर्वेदी, डी०लिट्०)



इस क्षेत्रका मान १० योजन माना गया है। परम्परानुसार एक योजन ४ कोश अर्थात् ८ मीलका होता है। कुल क्षेत्र ८० वर्गमीलका बनता है। यह भू-भाग प्रभुका विग्रह ही है—

इस क्षेत्रकी पूजा करने सुर-असुर-किन्नर-गन्धर्व भी सर्वदा आते हैं। तीर्थराजकी मृत्तिकासे यह व्याप्त है। इसके मध्य नीलाचल पर्वत इतना भव्य एवं उच्च है कि पृथ्वीके स्तनकी भाँति शोभायमान होता है। महाकवि कालिदासने अपने मेघदूतमें रामगिरि पर्वतको पृथ्वीका एक स्तन बतलाया है। सम्भव है, पुराणका यह अंश उन्हें रुचा हो—

नीलाचलेन महता मध्यस्थेन विराजितम्।

एकं स्तनमिवावन्याः सूदुरात् परिभाषितम्॥

श्रीविष्णुभगवान्ने ब्रह्माजीसे कहा—‘सागरके उत्तर तीरपर महानदीके दक्षिणमें जो प्रदेश है, वह तीर्थोंके फलका प्रदान करनेवाला है। एकाम्रकक्षेत्रसे दक्षिण-समुद्रपर्यन्त उत्तरोत्तर श्रेष्ठ भू-भाग है। यह स्थान मायासे आच्छन्न रहता है, अतः सर्वसाधारणकी दृष्टिमें नहीं आ सकता है।’ एकाम्रक पुराणकारने कहा है—

‘सुरासुराणां दुर्जेयं मायया छादितुं मम।’

पुरुषोत्तमक्षेत्रकी एक विशेषता सबसे भिन्न लिखी है कि यह सृष्टि और प्रलयसे दूर ही है। इस क्षेत्रके वारुण अर्थात् पश्चिम दिशामें रोहिण नामक कुण्ड है। यह परम पवित्र है। इस कुण्डमें एक बार एक वायसराज प्यासके कारण जल-ग्रहण करनेको उद्यत हुए। जलका स्पर्श करते ही उनको भगवान्‌के दर्शन हुए और चार भुजाका उनका दिव्य शरीर बन गया। वायस (काक)-रूप तिरोहित हो गया था। रोहिणके तटपर चर्मचक्षुसे भी प्रभुके दर्शन करनेवाले प्राणी पापोंको त्यागकर भगवान्‌की सायुज्य नामक मुक्ति प्राप्त करते हैं। लक्ष्मीजीने यमराजसे कहा है कि वह ५ कोशका क्षेत्र समुद्रके भीतर व्यवस्थित है, इसमें सुवर्णकी बालुका है और नील पर्वत है। इसकी पश्चिमी सीमा शंखकी-सी आकृतिकी है। इसमें समुद्रका जल है।

‘यत्सम्पर्कात् समुद्रोऽपि तीर्थराजत्वमागतः।’

तीर्थ नहीं, तीर्थराज संज्ञा देकर इसके महत्त्वके प्रति ध्यानाकृष्ट किया गया है।

कपालमोचन

इसी क्षेत्रमें सुप्रसिद्ध कपालमोचन नामक तीर्थ है। पुराणोंके अनुसार ब्रह्माजीके पाँच सिर थे। एक बार रुद्र भगवानने क्रोधमें आकर उनके एक मुखका छेदन कर

दिया, वह सिर भूतलमें घूमने लगा और अन्तमें यहाँ आकर गिर पड़ा, अतः इसे कपालमोचन तीर्थके नामसे पवित्रस्थल माना गया। यहाँकी अन्तर्वेदीकी कामना देवगण भी करते हैं। यहीं कामाख्या, क्षेत्रपाल-विमला और नृसिंह भी विराजमान हैं। इस अन्तर्वेदीकी रक्षा श्रीजगदम्बा करती हैं। वटमूलमें मंगला, पश्चिममें विमला, शंखके पूर्व भागमें सर्वमंगला, उत्तरमें अर्धाशनी और लम्बा, दक्षिणमें कालरात्रि और पूर्वमें मरीचिका विराजमान होकर रक्षा करती हैं। कालरात्रिके पृष्ठभागमें चण्डी हैं। रुद्राणीके आठ भेद देखकर ही शिवको भी आठ मूर्ति स्वीकार करनी पड़ी। आठ लिंगोंके नाम हैं—कपालमोचन, क्षेत्रपाल, यमेश्वर, मार्कण्डेय, ईशान, विश्वेश, नीलकण्ठ, वटेश। इन आठ लिंगोंका दर्शन भी मुक्तिप्रद माना गया है। दर्शनके साथ स्मरण भी मुक्तिप्रद है। इसके प्रसिद्ध नामोंमें पुरी या जगदीशपुरी है, वैसे स्पष्टताके लिये जगन्नाथपुरी कहते हैं।

गुण्डिचा-यात्रा

पुराणोंमें इस स्थलके लिये गुण्डिचा नाम आया है। पुरीमें श्रीमहाप्रभुके मन्दिरसे लगभग दो मील दूर गुण्डिचा तीर्थ है। इसके निकट ही इन्द्रद्युम्न सरोवर है।

गुण्डिचा-यात्राको घोषयात्रा भी कहते हैं। आषाढ़ शुक्ल द्वितीयासे दशमीतक नौ दिनोंकी यह यात्रा विश्वप्रसिद्ध है। तीन रथोंपर बलभद्र, सुभद्रा और जगन्नाथजीको विराजमान कराकर रथोंको खींचते हुए गुण्डिचा मन्दिरतक ले जाते हैं।

श्रीजगन्नाथजी

कुछ विद्वानोंकी मान्यता है कि श्रीजगन्नाथजीकी कथाका स्रोत ऋग्वेदका यह मन्त्र है—

अदो यद् दारु प्लवते सिन्धोः पारे अपरुषम् ।

तदा रभस्व दुर्हणो तेन गच्छ परस्तरम् ॥

(१०।१५५।३)

काशीखण्डमें भी श्रीजगन्नाथका वर्णन है। भविष्यपुराणमें श्रीजगन्नाथमाहात्म्य है। श्रीजगन्नाथधाम चार पावन धामोंमें भी एक धाम है, सात पुरियोंमें एक पुरी है। सत्ययुगका धाम बदरीनाथ, त्रेताका रामेश्वर, द्वापरका द्वारकाधाम और कलियुगका धाम श्रीजगन्नाथधाम है। श्रीजगन्नाथजीके प्रसादकी महिमा विख्यात है। यहाँ

A black and white line drawing of a traditional Indian temple complex. The central feature is a large, ornate dome (Shikhara) with a flag on top. To its right is a smaller, similarly styled dome. In the foreground, there are several smaller structures, including a gatehouse (Gopuram) and a platform. The background shows a landscape with trees and a cloudy sky.

श्रीजगन्नाथजीके दर्शनोंका लाभ प्राणिमात्रको सुलभ है। ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र-अन्त्यज, धर्मी-विधर्मी कोई भी क्यों न हो, सबको मन्दिरमें जानेका और परमपिता परमात्माके दर्शन करनेका अवसर वहाँ सुलभ है। एक प्रकारसे 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का स्वरूप मुक्त बन्धनोंके कारण यहाँ साकार हो गया। इस विशाल मन्दिरके अन्दर छोटे-मोटे अनेक मन्दिर हैं। श्रीलक्ष्मीजीका मन्दिर, श्रीशंकराचार्य तथा लक्ष्मीनारायणकी मूर्तियाँ हैं।

निज (मुख्य) मन्दिरसे एक द्वार बाहर जाता है, इसे वैकुण्ठद्वार कहते हैं। इसके समीप ही वैकुण्ठेश्वर महादेव विराजमान हैं। यहीं एक बगीचा-सा है, जहाँ प्रति बारह वर्षके पश्चात् कलेवर-परिवर्तनके अनन्तर पुराने कलेवरको समाधि दे दी जाती है।

द्वारपर जय-विजयकी मूर्तियाँ हैं। इनसे अनुमति लेकर ही निज मन्दिरमें जाना चाहिये। जगमोहनमें भोगमण्डप है अर्थात् यहीं गरुडस्तम्भ है। श्रीचैतन्य महाप्रभु यहींसे श्रीजगन्नाथ प्रभुके दर्शन करते थे।

‘महा अम्बुधिके तीरपर कनककान्ति-युक्त नीलाचल-
पर बलभद्र, सुभद्रासंयुक्त प्रासादान्तमें विराजित सम्पूर्ण
देवोंको सेवा अवसरदायी श्रीजगन्नाथ स्वामी मेरे नयनोंमें
विराजते रहें।’

श्रीचैतन्य महाप्रभु जिस स्थानसे दर्शन करते थे और नेत्रोंसे फुहारे पा अश्रुधारा प्रवाहित होती थी, वहाँ एक गर्त बन गया था। वह अश्रुधारासे पूरित हो जाता था। श्रीचैतन्य महाप्रभु तो जगन्नाथजीके विग्रहमें ही ज्योतिरूपमें प्रविष्ट हो गये।

एक बार महान् प्रतापी राजा इन्द्रद्युम्नने स्वप्नमें चतुरायुध, लक्ष्मीसहित विष्णु भगवान्का दर्शन किया। जब उन्होंने यज्ञ किया तो भृत्योंद्वारा विचित्र वृक्षका वर्णन सुना। मांजिष्ठवर्ण सूर्य-आभावाले वृक्षकी बात नारदजीसे पूछी। नारदजीने कहा—‘राजन्! आपने स्वप्नमें विग्रह देखा था, यह वही है। श्वेतद्वीपवासी प्रभुके लोमसे यह बना है। राजाने यज्ञका अवभृथ-स्नान किया और महामहोत्सव सम्पन्न करके ब्राह्मणोंद्वारा वृक्षरूप यज्ञेश भगवान्को वेदीसे स्थापित किया। जब प्रकरण चला कि इस वृक्षसे प्रतिमा कैसी बने और कौन इससे प्रतिमा बनाये तब आकाशवाणी हुई कि इस वृक्षको १५ दिन ढका रहने दो। एक वृद्ध शिल्पी आयेगा, उसे इस कोष्ठके भीतर कर देना। जबतक वह निर्माण करे तबतक अनेक वाद्य ऐसे बजाये जायँ, जिससे उसके आयुधोंकी ध्वनि कोई बाहर न सुने। बढ़ईके द्वारा जो छीलने-काटनेकी आवाज सुनेगा, वह अन्धा और बहरा हो जायगा। उसका वास कल्पोत्तक नरकमें होगा और वंश-नाश हो जायगा। स्वयं राजा भी भीतर प्रवेश न करे। जिसकी नियुक्ति की जाय, वह भी भीतर जाकर बढ़ईको न देखे। जो नियुक्त पुरुष भी यदि भीतर जायगा तो राष्ट्रका नाश हो जायगा। उस विधिसे जब राजाने तैयारी की तो एक वृद्ध बढ़ई आया और आकाशवाणीके अनुसार उसे भीतर कर दिया गया।

प्रतिष्ठा

सुभद्रा

भगवान् श्रीकृष्णजीकी प्रतिष्ठा वैशाख शुक्ल अष्टमी

सुभद्रा चारुवदना कराब्जाभयधारिणी ।

गुरुवार पुष्य नक्षत्रमें सम्पन्न हुई।

लक्ष्मीः प्रादुर्बभूवेयं सर्वचैतन्यरूपिणी ॥

वैशाखस्यामले पक्षे अष्टम्यां पुष्ययोगता ।

श्रीसुभद्राजी साक्षात् लक्ष्मी हैं। ऋग्वेदकी कुछ ऋचाओं और पुराणोंमें इन्हें लक्ष्मीका अवतार माना गया है। उपर्युक्त श्लोकमें उन्हें स्पष्ट ही लक्ष्मी-अवतार स्वीकारा है। प्रतिवर्ष इन विग्रहोंका संस्कार कैसे किया जाय, इसकी विधिकी वर्णन भी प्राप्त होता है। जैसे—भगवान्‌के विग्रहसे लेप न हटाया जाय, लेप हटानेसे राज्यमें दुर्भिक्ष हो जाता है, विश्वासानुसार वैष्णव परिवारका वंशज ही लेप करेगा। राजा इन्द्रद्युम्ने नारदजीके निर्देशानुसार प्रासादका निर्माण

कृता प्रतिष्ठा भो विप्रा शोभने गुरुवासरे ॥

भगवान् विष्णुका प्रसाद गंगाजलकी भाँति पवित्र है। जैसे गंगामें कोई पतित भी जाय तो भी वह पाप नाश करती हैं, ऐसे ही इस भगवत्प्रसादको कोई भी स्पर्श करे, तो भी कोई अपवित्रता नहीं होती।

नैवेद्यानां जगद्धर्तुर्गाङ्गं वारिसमं द्वयम् ।

दृष्टिस्पर्शनचिन्ताभिर्भक्षणादघनाशनम् ॥

प्रसादका दर्शन, स्पर्श, भक्षण पापनाशक कहा

गया है।

श्रीजगन्नाथाष्टकम्

कदाचित् कालिन्दीतट-विपिन-संगीत-तरलो मुदाभीरी-नारी-वदन-कमलास्वाद-मधुपः ।

रमा-शम्भु-ब्रह्मामरपतिगणेशार्चितपदो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ १ ॥

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे दुकूलं नेत्रान्ते सहचर-कटाक्षं विदधते ।

सदा श्रीमद्वृन्दावन-वसति-लीला-परिचयो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ २ ॥

महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे वसन् प्रासादान्तः सहजबलभद्रेण बलिना ।

सुभद्रामध्यस्थः सकलसुरसेवावसरदो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ ३॥

कृपापारावारः सजलजलदश्रेणिरुचिरो रमावाणीरामः स्फुरदमलपङ्केरुहमुखः ।

सुरेन्द्रैराध्यः श्रुतिगणशिखागीतचरितो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ४ ॥

रथारूढो गच्छन् पथि मिलितभदेवपटलैः स्तुतिप्रादुर्भावं प्रतिपदमुपाकर्ण्य सदयः ।

दयासिन्धुर्बन्धः सकलजगतां सिन्धु-सदयो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ५ ॥

परब्रह्मापीडः कवलयदलोत्फल्लनयनो निवासी नीलाद्रौ निहितचरणोऽनन्तशिरसि ।

रसानन्दी राधा-सरसवपरालिङ्गनसुखो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ६ ॥

न वै याचे राज्यं न च कनकमाणिक्यविभवं न याचेऽहं रम्यं सकलजनकाम्यं वरवधम।

सदा काले काले प्रमथपतिना गीतचरितो जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवत मे ॥ ७ ॥

हर त्वं संसारं द्रुततरमसारं सरपते! हर त्वं पापानां विततिमपरां यादवपते!

अहो दीनेऽनाथे निहितचरणो निश्चितमिदं जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवत मे॥८॥

जगन्नाथाष्टकं पण्यं यः पठेत प्रयतः शचिः । सर्वपापविशद्धात्मा विष्णुलोकं स गच्छति ॥ १ ॥

॥ इति श्रीगौरचन्द्रमुखपद्मविनिर्गतं श्रीजगन्नाथाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

आध्यात्मिक प्रश्नोत्तर

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

एक सज्जनने कुछ उपयोगी प्रश्न लिख भेजे हैं। उनका उत्तर अपनी स्वल्पबुद्धिके अनुसार नीचे देनेकी चेष्टा की जाती है। प्रश्नोंकी भाषा आवश्यकतानुसार सुधार दी गयी है। प्रश्न इस प्रकार हैं—

(१) जीव, आत्मा और परमात्मामें क्या भेद है ?

(२) सुख-दुःख किसको होते हैं—शरीरको या आत्माको ? यदि कहा जाय कि शरीरको होते हैं, तो शरीर तो जड़ पदार्थोंका बना हुआ है, जड़ पदार्थोंको सुख-दुःखकी अनुभूति कैसे होगी ? और शरीर तो मरनेके बाद भी कायम रहता है, उस समय उसे कुछ भी अनुभूति नहीं होती। यदि यह कहा जाय कि सुख-दुःखकी अनुभूति आत्माको होती है तो यह कहना भी युक्तिसंगत नहीं मालूम होता; क्योंकि गीता आदि शास्त्रोंमें आत्माको निर्लेप, साक्षी एवं जन्म-मरण तथा सुख-दुःखादिसे रहित बतलाया गया है। इसके अतिरिक्त चीर-फाड़ करते समय डॉक्टरलोग रोगीको क्लोरोफार्म सुँघाकर बेहोश कर देते हैं। आत्मा तो उस समय भी मौजूद रहता है, फिर रोगीको कष्टका अनुभव क्यों नहीं होता ?

(३) शुभाशुभ कर्मोंके अनुसार नाना योनियोंमें जन्म आत्माका होता है या पंचभूतोंका ? यदि कहा जाय कि आत्माका, तो आत्मा तो साक्षी एवं निर्लेप होनेके कारण कर्ता नहीं है और जन्म होता है कर्मोंके अनुसार कर्मोंके फलस्वरूपमें। ऐसी दशामें आत्माका जन्म क्यों होगा और वह सुख-दुःखका भोक्ता भी क्यों होगा ? यदि कहा जाय कि पंचभूतोंका ही जन्म होता है, आत्माका नहीं, तो यह कहना भी युक्तिसंगत नहीं मालूम होता; क्योंकि मृत्युके बाद शरीरका पांचभौतिक अंश अपने-अपने तत्त्वमें मिल जाता है, फिर जन्म किसका होगा ?

उपर्युक्त प्रश्नोंका उत्तर क्रमशः नीचे दिया जाता है—

(१) प्राणिमात्रकी 'जीव' संज्ञा है। स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण—इन तीन प्रकारके व्यष्टिशरीरोंमेंसे एक, दो या तीनोंसे सम्बन्धित चेतनका नाम 'जीव' है। इन तीनों शरीरोंके सम्बन्धसे रहित व्यष्टि-चेतनका नाम 'आत्मा' है। इसीको 'कूटस्थ' भी कहते हैं। वैसे तो गीतादि शास्त्रोंमें मन, बुद्धि, शरीर तथा इन्द्रिय आदिके लिये भी 'आत्मा' शब्दका व्यवहार हुआ है; परंतु प्रश्नकर्ताने मन,

बुद्धि, शरीर, इन्द्रिय आदिसे भिन्न शुद्ध चेतनके अर्थमें 'आत्मा' शब्दका प्रयोग किया है। अतः उसीके अनुसार 'आत्मा' का लक्षण किया गया है। तथा शुद्ध सच्चिदानन्दधन गुणातीत अक्षर ब्रह्मको परमात्मा कहते हैं। आकाशके दृष्टान्तसे उक्त तीनों पदार्थोंका भेद कुछ-कुछ समझमें आ सकता है। जो आकाश अनन्त घटोंमें समानरूपसे व्याप्त है, उसे वेदान्तकी परिभाषामें महाकाश कहते हैं और जो किसी एक घटके अन्दर सीमित है, उसे घटाकाश कहते हैं। महाकाशस्थानीय परमात्मा हैं, घटाकाशस्थानीय आत्मा अथवा शुद्ध चेतन है और जलसे भरे हुए घड़ेके अन्दर रहनेवाले जलसहित आकाशके स्थानमें जीवको समझना चाहिये। इसीको जीवात्मा भी कहते हैं। स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण—इन तीनों प्रकारके शरीरोंमेंसे एक, दो या तीनों शरीरोंसे सम्बन्ध होनेपर ही इसकी 'जीव' संज्ञा होती है। इनमेंसे कारणशरीरके साथ तो जीवका अनादि सम्बन्ध है, महासर्गिके आदिमें उसका सूक्ष्मशरीरके साथ सम्बन्ध हो जाता है, जो महाप्रलयपर्यन्त रहता है और देव-तिर्यक्-मनुष्यादि योनियोंसे संयुक्त होनेपर उसका स्थूलशरीरके साथ सम्बन्ध हो जाता है। एक शरीरको छोड़कर जब यह जीव दूसरे शरीरमें प्रवेश करता है, उस समय पहला शरीर छोड़ने और दूसरे शरीरमें प्रवेश करनेके बीचके समयमें उसका सम्बन्ध सूक्ष्म और कारण दोनों शरीरोंसे रहता है और जब यह किसी योनिके साथ सम्बद्ध रहता है, उस समय इसका स्थूल, सूक्ष्म, कारण—तीनों शरीरोंसे सम्बन्ध रहता है।

(२) दूसरा प्रश्न यह है कि सुख-दुःखका भोक्ता शरीर है या आत्मा। इस सम्बन्धमें प्रश्नकर्ताका यह कहना ठीक ही है कि सुख-दुःखका भोक्ता न केवल शरीर है और न शुद्ध आत्मा ही। तो फिर इनका भोक्ता कौन है ? इसका उत्तर यह है कि शरीरके साथ सम्बद्ध हुआ यह जीव ही सुख-दुःखका भोक्ता है। गीतामें भी कहा है—

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान् गुणान्।

कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु॥

(१३।२१)

'प्रकृतिमें स्थित हुआ ही पुरुष प्रकृतिसे उत्पन्न

(३) तीसरा प्रश्न यह है कि शुभाशुभ कर्मके अनुसार नाना योनियोंमें जो जन्म होता है, वह आत्माका होता है या पंचभूतोंका। इस विषयमें भी प्रश्नकर्ताका यह कहना युक्तियुक्त ही है कि शुद्ध आत्मा तो जन्मता-मरता नहीं और पंचभूतोंका भी जन्मना-मरना नहीं कहा जा सकता, फिर जन्मने-मरनेवाली वस्तु कौन-सी है? इसका उत्तर यह है कि जो जीव सुख-दुःख भोगता है, वही जन्मता-मरता भी है। यही बात गीता (१३। २१)–में कही गयी है—**कारणं गुणसङ्गोऽस्य**

सदसद्योनिजन्मसु ॥

जीवात्माका जन्म-मरण किस प्रकार होता है, इसका रहस्य समझनेके लिये पहले जन्म और मृत्युके तत्त्वको जानना आवश्यक है।

यह बात ऊपर कही जा चुकी है कि स्थूल, सूक्ष्म, कारण—इन तीन शरीरोंमेंसे कम-से-कम एक शरीरके साथ सम्बन्ध जीवका रहता ही है। महाप्रलयके समय तथा गाढ़ निद्रा एवं मूर्च्छा आदिकी अवस्थामें जीवका सम्बन्ध केवल कारणशरीरसे रहता है; ब्रह्माकी रात्रिमें, स्वप्नावस्थामें तथा एक स्थूल शरीरको छोड़कर दूसरे स्थूल शरीरमें प्रवेश करते समय कारण एवं सूक्ष्म दोनों शरीरोंके साथ सम्बन्ध रहता है और जाग्रत्-अवस्थामें, जबतक यह जीव किसी योनिविशेषसे संयुक्त रहता है, उसका स्थूल, सूक्ष्म, कारण—तीनों शरीरोंके साथ सम्बन्ध रहता है। यह भी बताया जा चुका है कि कारणशरीरके साथ सम्बन्ध तो जीवका अनादि कालसे है और जबतक यह मुक्त नहीं होगा तबतक रहेगा; सूक्ष्म शरीरके साथ सम्बन्ध महासर्गके आदिसे लेकर महाप्रलयपर्यन्त रहता है और स्थूल शरीरके साथ सम्बन्ध इसका पुनः-पुनः होता और टूटता है। कर्मानुसार जीवका किसी एक स्थूल शरीरके साथ सम्बन्ध होना ही उसका जन्म कहलाता है और आयु शेष हो जानेपर उस शरीरके साथ सम्बन्धविच्छेद हो जाना ही उसकी मृत्यु है।

अब प्रश्न यह होता है कि इस प्रकार एक शरीरसे दूसरे शरीरमें जाना-आना किसका होता है ? आत्मा तो आकाशकी भाँति सर्वव्यापी है, अतः उसका गमनागमन नहीं बन सकता। इसका उत्तर यह है कि गमनागमन वास्तवमें सूक्ष्मशरीरका होता है। सूक्ष्मशरीरमें प्राणोंकी प्रधानता है और प्राण वायुरूप हैं, अतः उनका जाना-आना युक्तियुक्त ही है। किंतु जैसे घड़ेको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें ले जाते समय उसके अन्दर रहनेवाला आकाश भी चलता हुआ प्रतीत होता है, उसी प्रकार सूक्ष्म शरीरके एक स्थूल शरीरसे दूसरे स्थूल शरीरमें जाते समय उसके सम्बन्धसे आत्मा भी जाता हुआ प्रतीत होता है—इस दृष्टिसे व्यवहारमें आत्माके भी आने-जानेकी बात कही जाती है। परंतु समझानेके लिये औपचारिक दृष्टिसे ही ऐसा कहा जाता है; वास्तवमें आत्मा कहीं आता-जाता नहीं, वह सदा सर्वत्र है।

‘सतसंगति महिमा नहिं गोई’

(स्वामी श्रीअच्युतानन्दजी महाराज)

सन्त और सत्संगकी महिमाका वर्णन सद्ग्रन्थों और सन्तवाणियोंमें भरपूर मिलता है। मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीरामकी वाणी है—‘**बड़े भाग पाइअ सतसंगा।**’

श्रीरामचरितमानस-उत्तरकाण्डका प्रसंग है—‘एक बार भगवान् श्रीराम अपने भाइयों—लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न और हनुमान्जीके साथ एक मनोरम पुष्पवाटिकामें विचरण कर रहे थे। उसी समय सन्त सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमारजी भगवान्के समीप आ गये। चारोंको देखते ही भगवान् श्रीरामने साष्टांग प्रणाम किया और बैठनेके लिये अपना पीताम्बर बिछा दिया।’

फिर भगवान् श्रीराम कहने लगे—

आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा । तुम्हरे दरस जाहिं अघ खीसा ॥

अर्थात् भगवान् श्रीराम कहते हैं—‘हे मुनीश्वर! आज मैं धन्य हो गया। आपके दर्शनसे सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।’ यहाँ सन्त-दर्शनका महत्त्व भगवान् बतला रहे हैं। सन्तोंका दर्शन भी सत्संग है। इसीलिये भगवान् कहते हैं कि—‘**बड़े भाग पाइअ सतसंगा।**’ सन्तोंके सत्संगसे संसारका क्लेश दूर हो जाता है।

सन्तोंके दर्शनसे पापोंका क्षय होता है, ऐसे कई उदाहरण हैं। जैसे—‘संत दरस जिमि पातक टरई।’

गोस्वामी तुलसीदासजीकी विनय-पत्रिकामें भी—

जब द्रवै दीनदयालु राघव, साधु-संगति पाइये।
जेहि दरस-परस-समागमादिक पापरसि नसाइये॥
सन्तोंकी महिमाका वर्णन भगवान् शंकर भी
करते हैं। गिरिजा अर्थात् पार्वतीजीसे भगवान् शंकर
कहते हैं—

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।

बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं बेद पुरान ॥

(रा०च०मा० ७।१२५)

अर्थात् सन्तोंका सत्संग हरिकी कृपासे ही प्राप्त होता है, ऐसा वेद-पुराण भी गाते हैं। उनकी माहिम्नाकी

बखान साधारण जन क्या; ब्रह्मा, विष्णु और महेश तथा कवि, पण्डित भी कहनेसे सकुचाते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजीने लिखा है—

बिधि हरि हर कबि कोबिद बानी । कहत साधु महिमा सकुचानी ॥

हमारे गुरुदेव भी सन्तोंकी स्तुति में कहते हैं—

सब सन्तन की बड़ि बलिहारी।

उनकी स्तुति केहि विधि कीजै,

मोरी मति अति नीच अनारी ॥

सन्तोंकी योग्यता कैसी होती है ? गोस्वामी
तलसीदासजी कहते हैं—

अमित बोध अनीह मितभोगी । सत्यसार कबि कोबिद जोगी ।

सन्तोंके ज्ञानका कोई अन्दाजा नहीं कर सकते हैं, उनको किसी सांसारिक पदार्थोंकी कोई इच्छा नहीं रहती। संसारमें जीवन-निर्वाहके लिये वे मितभोगी होते हैं। सत्यके तो वे सार ही होते हैं। वे कवि होते हैं, सारे ज्ञानके ज्ञाता, पण्डित होते हैं, वे महायोगी होते हैं। सन्तोंको अलौकिक तीर्थराज कहा गया है, जहाँ तुरन्त फल मिलता है।

अकथ अलौकिक तीरथ राऊ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ॥

ये सन्त चलते-फिरते तीर्थराज होते हैं। जो आनन्द और कल्याणमय होते हैं। ऐसे सन्तरूपी पावन तीर्थमें स्नान करनेवालेको सुबुद्धि, यश, उत्तमगति, सम्पत्ति और सज्जनता मिलती है। इसके लिये आश्चर्य नहीं करना चाहिये। गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं—

सुनि आचरज करै जनि कोई । सतसंगति महिमा नहिं कोई ॥

मति कीरति गति भूति भलाई । जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई ॥

सो जानब सतसंग प्रभाऊ । लोकहुँ बेद न आन उपाऊ ॥

सन्तरूपी तीर्थराजमें रामभक्तिरूपी गंगाकी धारा बहती है। ब्रह्मविचाररूपी सरस्वतीकी धारा तथा कर्तव्य-कर्म और अकर्तव्य-कर्मका वर्णन यमुनाकी धारा है। इन तीनोंके संगम होनेपर भी त्रिवेणी नहीं हुई, त्रिवेणी कब भी नहीं मिलती है।

[प्रेषक—श्रीहितेशजी मोदी]

बीमा रह होनेकी सूचना मिलते ही न्यायाधीश श्रीबनर्जीके मुखपर शान्ति तथा सन्तोषकी छबि दिखायी दी तथा उन्होंने तलसी-गंगाजलका पान किया और भगवानका स्मरण करते हुए प्राण त्याग दिये।

वाणीका सदुपयोग करें !

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

पाण्डवोंका राजसूय यज्ञ हुआ। उस जमानेमें मय दानव थे, जो एक बड़े वैज्ञानिक थे। उन्होंने इस प्रकारका मण्डप बनाया कि जहाँ जल था, वहाँ जमीन दीखती और जहाँ जमीन थी, वहाँ जल लहराता हुआ दीखता। यह बात सबको ज्ञात नहीं थी। वहाँ दुर्योधन आये तो देखा कि जल लहरा रहा है, परंतु वहाँ थी जमीन, उन्होंने अपने कपड़े ऊपर उठा लिये कि कहीं भीग न जायँ। कुछ लोग मुसकुरा दिये। कुछ और आगे बढ़े तो वहाँ जल था, परंतु समतल जमीन प्रतीत हो रही थी। वहाँ वे सीधे आगे बढ़े तो उनके सारे कपड़े भीग गये। यह देखकर भीमसेन और द्रौपदी दोनों हँस पड़े। भीमसेनने कह दिया कि आखिर है तो अन्धेका ही पुत्र न! उनकी यह बात दुर्योधनको तीरकी तरह चुभ गयी। धर्मराज बोले—क्या कहते हो? परंतु जबानसे तो बात निकल ही गयी। आजकल लोग अपनी बातको वापस लेते हैं। गाली दे दी और कहते हैं हम अपनी बात Withdraw करते हैं—वापस लेते हैं। वाणी वापस लेनेकी चीज नहीं है। उनकी वह बात दुर्योधनको चुभ गयी। उसने ठान लिया कि या तो पाण्डव रहेंगे या हम रहेंगे। वैर बद्धमूल हो गया। इसलिये ऐसी वाणी न बोले जो दूसरेको चभ जाय।

जो भी बोले सत्य बोले। वैसे शब्द कह देना इसका नाम सत्य नहीं है। सत्य भावसे होता है। जैसे कोई मित्र हमारे यहाँ आये और कोई आकर बोले कि आपके मित्र आये हैं उनसे मिलना है। परंतु भूलसे अथवा अन्य किसी परिस्थितिवश मुलाकात नहीं हो पायी और रास्तेमें जाते हुए भेंट हो जाय। तब यदि कहें कि मुझे मालूम था आप आये हैं, परंतु मिल नहीं पाये तो झोंप होती है और यह कह दें कि आप कब आये तो झूठ होता है। इसलिये छलकी भाषा बनाते हैं—‘आप आज आये’ तीन शब्द बोले, परंतु उच्चारण इस प्रकार किया कि प्रश्नवाचक हो गया। हमें मालूम था कि यह आज आये हैं और कह भी दिया कि ‘आप आज आये’। शाब्दिक रूपसे झूठ तो नहीं हुआ, परंतु हमने उनको समझाया क्या ? हमने अपने बोलनेके ढंगसे यह बताया कि हमें मालूम नहीं कि आप आज आये हैं। इसलिये यह झूठ हो गया। परंतु हम इन शब्दोंको न बोल सकें और उन्हें इशारेसे समझा दें

कि आप आज आये, हमें मालूम था तो यह सत्य हो गया।
भले ही, शब्द न बोलें।

एक होता है—‘शब्दजाल’। महाभारतयुद्धमें भीमसेनने अश्वत्थामा नामक हाथीको मार दिया। फिर जाकर युधिष्ठिरसे बोले कि आप कह दीजिये कि अश्वत्थामा मर गया, तब द्रोणके हाथसे हथियार गिर पड़ेंगे और उसी अवस्थामें उन्हें मारा जा सकता है। धर्मराज बहुत असमंजसमें पड़ गये, लेकिन अन्ततः किसी प्रकार दब गये। उन्होंने कह दिया—‘अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो’—अश्वत्थामा मारा गया आदमी या हाथी। बादमें हाथी बोले, तबतक श्रीकृष्णने शंख बजा दिया और वह शब्द सुनायी नहीं दिया। अश्वत्थामा मारा गया—यह छल हो गया। शब्द—छलसे अगर हम किसीको वही शब्द कह देते हैं और हमारे मनमें समझानेकी बात कोई दूसरी रहती है तो वह झूठ है।

अतएव उद्वेगकारी वचन न बोले, सच बोले और सच भी मधुर शब्दोंमें कहे। लोग कहते हैं गर्वसे कि मैं सच बोलता हूँ, चाहे किसीको अच्छी लगे या खारी लगे। परंतु कोई उनसे वैसे ही बोले तब। यह विचारणीय है। इसलिये वाणीको बोलना चाहिये अमृतमें घोलकर—‘सत्यं प्रियहितं च यत’।

बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा । खाइ महा अहि हृदय कठोरा ॥

(रा०च०मा० ७।३९।८)

मोर बड़ा मीठा बोलता है और साँप भी खा जाता है। ऊपरसे मीठा बोलना ही नहीं, हृदय भी मधुर हो और जबान भी मधुर हो। मीठी बोलीका अर्थ क्या है ? जिसमें हितकी भावना भरी हो। इसलिये दूसरेके मनमें उद्वेग करनेवाली जबान बोलना पाप, झूठ बोलना पाप, अप्रिय बोलना पाप, दूसरेके अहितकी बात बोलना पाप और व्यर्थ बोलना पाप है। इन पापोंसे जबानको बचाकर क्या करें ? सबमें भगवान् हैं—यह समझकर सबका हित करनेकी इच्छासे सत्यप्रिय बोले और जब समय मिले तो जीभके द्वारा भगवानका नाम लेता रहे।

‘स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥’

(गीता १७।१५)

यह वाणीका सदुपयोग है।

(श्रीहरिश्चन्द्रजी श्रीवास्तव)

अध्यात्म क्या है ? अर्जुनके इस प्रश्नका श्रीकृष्ण उत्तर देते हैं—**स्वभावः अध्यात्ममुच्यते।** (गीता ८। ३) अर्थात् स्वभाव ही अध्यात्म है। स्वभाव क्या है, इसे स्पष्ट करते हुए भाष्यकार श्रीशंकराचार्य कहते हैं—**‘ब्रह्मणः प्रतिदेहं अन्तरात्मभावः स्वभावः।** अर्थात् प्रत्येक शरीरमें परमात्मा (ब्रह्म) —की अन्तरात्मारूपसे उपस्थिति ही स्वभाव (अपना भाव) है। यही अध्यात्म है। केवल मनुष्य-शरीरमें ही नहीं, वरन् पशु-पक्षीसहित सम्पूर्ण प्रकृतिमें भगवान्की उपस्थिति है, इसे जानना-समझना-अनुभव करना आध्यात्मिकता है। यही है कण-कणमें भगवान्वाली भारतकी चिन्तनदृष्टि, जो भारतीय संस्कृतिका मूलाधार है। श्रीअरविन्द इसे ही अपने चिन्तनसे परिपुष्ट करते हैं। इसीसे अनुप्राणित होकर वे भारतको मात्र एक भूखण्डके रूपमें नहीं, वरन् भवानी भारतीके रूपमें देखते हैं। वे स्वाधीनता (१५ अगस्त १९४७) —से बहुत पहले ही भारतको देवी कालीद्वारा स्वतन्त्र कराये जानेका स्वप्न देख चुके होते हैं और प्रार्थना करते हैं कि देवी भारतभूमिपर निवास करते हुए विश्वका कल्याण करें। यही आध्यात्मिक चिन्तन उनके उत्तरपाड़ा भाषण (१९०९) —में भी प्रकट होता है, जहाँ वे कहते हैं कि यही सनातन धर्म है, जो भारतकी राष्ट्रीयता है, जिसका पुनर्जागरण सम्पूर्ण मानवताके लिये वांछनीय है।

अब हम इस अध्यात्मके पीछेकी चिन्तन-प्रणालीका विचार करते हैं, जिसे दर्शन अथवा फिलासफी कहा जाता है। यद्यपि भाषामें दर्शन और फिलासफीको पर्यायवाची समझा जाता है, तथापि इनमें एक मूलभूत अन्तर है। भारतीय दर्शनमें परम तत्त्वकी स्वात्मानुभूतिपर सारा ध्यान केन्द्रित होता है, किंतु पाश्चात्य फिलासफीमें जैसा कि उसका शाब्दिक अर्थ है, बौद्धिक विश्लेषणपर जोर दिया जाता है।

ब्रह्म, जीव और जगत्का चिन्तन किया गया है। हम श्रीअरविन्दकी चिन्तनधाराका अनुसरण करते हैं। श्रीअरविन्दके अनुसार ब्रह्म सत्य है, जगत् भी सत्य है; क्योंकि जगत् ब्रह्ममय है। ब्रह्म एकमेव अद्वितीय है, उसके जैसा अन्य कोई भी नहीं है, अतः जीव भी तत्त्वतः वही है, उससे भिन्न नहीं है।

यहाँ श्रीअरविन्दका चिन्तन उन मायावादियोंसे अलग है, जो जगत्को मिथ्या बताते हैं। वे कहते हैं— जिस प्रकार सूर्यका प्रतिबिम्ब सूर्यका ही प्रकाश होनेसे सत्य है, उसी प्रकार ब्रह्मसे ओतप्रोत होनेसे जगत् भी सत्य है। चिन्मय जगत् भी सत्यस्वरूप भगवान्का सत्य प्रकाश है। जो लोग जगत्को व्यवहारिक रूपसे सत्य किन्तु पारमार्थिक रूपसे असत्य मानते हैं, उनके लिये श्रीअरविन्दका उत्तर है कि वे लोग मनको सन्तोष देनेके लिये ही ऐसा कहते हैं; क्योंकि वे जगत्को सहसा नकार भी नहीं सकते। श्रीअरविन्दका निर्णय है कि सत्यस्वरूप ब्रह्ममें कुछ भी असत्य नहीं है।

जीवके विषयमें श्रीअरविन्दका विचार है कि यह (जीव) भी जगत्-ब्रह्मका उपभोग करनेके लिये ही अवतीर्ण हुआ है। जिस प्रकार ब्रह्म सत्, चित् और आनन्दस्वरूप है, उसी प्रकार जीव भी सत्य है, चेतन है और अपने अन्तस्से आनन्दमय ही है। जो कुछ दुःखरूपसे दिखता है, वह केवल आनन्दका विवर्त है। जिस प्रकार उद्वेलित जलसे लहर, फेन, बुलबुले आदि जलके विवर्त हैं, उसी प्रकार अशान्त और उद्वेलित चित्तमें दुःख आदि आनन्दके विवर्त हैं। जिस प्रकार जलके प्रशान्त चित्त हो जानेपर फेन, लहर, बुलबुले सब समाप्त हो जाते हैं, उसी प्रकार जीवको उसका निश्चय एवं शान्त आत्मस्वरूप प्राप्त हो जानेपर दुःखादि समाप्त हो जाते हैं। अपने सत्यस्वरूपकी विस्मृतिके कारण ही जीव स्वयंको सीमित, दुर्बल और दुखी समझता है। इसका कारण उसका अज्ञान है, इसीसे अहंकार स्फुटित

कृपा पीछे हट जाती है। दूसरा महत्वपूर्ण बिन्दु है त्याग।

यहाँ त्यागका तात्पर्य है अपनी समस्त कुटिलताओंका त्याग तथा पूर्ण ईमानदारीके साथ सत्यका वरण असत्यका परित्याग। इसके लिये चाहिये हृदयमें भक्ति भावना एवं श्रद्धा। इस साधनाका तीसरा महत्वपूर्ण अंग है **समर्पण**। यह निष्कपट एवं सच्चा होना चाहिये। ऐसे समर्पणके साथ साधक अपनेको भगवान्‌के हाथोंमें सौंप देता है। मनुष्यके शरीरमें भगवान्‌ आत्मारूपमें विराजते हैं और उनका यन्त्र है चैत्य पुरुष, जो हमारे भीतर मानो सोया पड़ा है। जबतक यह जागता नहीं, तबतक हमारे मन और बुद्धि ही सारी क्रियाओंको नियन्त्रित करते हैं। चूँकि मन-बुद्धि जड़ है, अतः हम अज्ञान और अपूर्णतामें जीते हैं। यदि चैत्य पुरुष जाग्रत् हो जाये तो मन-बुद्धि चैत्य पुरुषके निर्देशनमें कार्य करने लग जायँगे। अतः साधनाका लक्ष्य चैत्य पुरुषको जाग्रत् करना है ताकि वह हमें भगवान्‌से संयुक्त कर दे।

हमारा प्रयास है कि शरीर, मन और बुद्धि तीनों भागवत इच्छाका अनुगमन करें। शरीरके द्वारा किये जानेवाले समस्त कार्य भगवान्को ही निवेदित होकर किये जायँ। खाना-पीना आदि समस्त शारीरिक कार्य भगवान्की पसन्द या इच्छाके अनुरूप हों। मन भगवान्के बारेमें ही सोचे और बुद्धि सत्साहित्यका ही अध्ययन करे और भगवान्का ही चिन्तन करे। इसके लिये प्रार्थना करनी चाहिये। प्रार्थना हृदयके अन्तःस्थलसे उठनी चाहिये और इसके द्वारा तुच्छ भौतिक कामनाओंकी पूर्तिकी अभिलाषा नहीं होनी चाहिये। मन्त्रका भी उपयोग किया जाना चाहिये। मन्त्र हमें उस देवतासे जोड़ता है, जिसका वह मन्त्र है। श्रीअरविन्द 'ॐ आनन्दमयि, चैतन्यमयि, सत्यमयि परमे' मन्त्रका प्रयोग करनेको कहते हैं, जो जगज्जननीकी कृपा प्राप्त करनेका मन्त्र है।

इस योगमें ध्यान और स्मरणको भी स्थान दिया गया है। श्रीअरविन्द कहते हैं कि ध्यानकी अपेक्षा स्मरण सरल है। इस बिन्दु या विचारपर ध्यान अधिक

इस योगमें ध्यान और स्मरणको भी स्थान दिया गया है। श्रीअरविन्द कहते हैं कि ध्यानकी अपेक्षा स्मरण सरल है। इस बिन्दु या विचारपर ध्यान अधिक

आये तो पीछे हट जाओ। तत्काल कुछ न करो। जब कोई तुमसे नाराज हो तो अपनी प्रतिक्रिया देनेसे बचो, पीछे हटो, शान्त रहो। इस प्रकार धीरे-धीरे आध्यात्मिक साधनाका सक्रिय जीवनमें अभ्यास करो। भगवान्‌के प्रति कृतज्ञ रहो, उनकी कृपाको कभी न भूलो। क्या होनेवाला है, ऐसी बातोंमें कभी न फँसो। यह योग प्रभुकी ओर लौटना सिखानेके लिये है।

अन्तमें, श्रीअरविन्दका मार्गदर्शन ‘हमारा अहंकार रखते हुए साहसके साथ अपने चुने हुए पथपर आगे यह समझ नहीं पाता कि भगवान् हमारा मार्गदर्शन बढ़ो।’

मॉरीशस और ब्रिटेनमें हिन्दू संस्कृति

बात उन दिनोंकी है, जब देश आजाद नहीं हुआ था। अंग्रेज शासक भारतीयोंको व्यक्ति नहीं, वस्तु समझा करते थे और मनमाने ढंगसे उनका उपयोग करते थे। उन्हीं दिनों अंग्रेजोंकी दृष्टिमें हिन्दू महासागरमें स्थित मेडागास्करसे पाँच सौ मील पूर्वमें एक द्वीप आया, जो उन्हें गन्नेकी खेतीके लिये उपयुक्त लगा। फिर क्या था, उन्होंने सात सौ भारतीय मजदूरोंको भेड़-बकरियोंकी तरह समुद्री जहाजमें भरकर अपने घर-परिवार और देशसे दूर उस टापूमें भेज दिया। यद्यपि ये मजदूर प्रायः अशिक्षित ही थे, परंतु इनमें हिन्दुत्व और भारतीयताके संस्कार कूट-कूटकर भरे थे। इन मजदूरोंको वहाँ क्रिश्चियन बननेके लिये विविध प्रकारके प्रलोभन और प्रताड़नाएँ दी गयीं, परंतु इन धर्मवीरोंने अपना धर्म और अपने संस्कार नहीं छोड़े।

परिवर्तन प्रकृतिका शाश्वत नियम है, समयने करवट बदली और मॉरीशस नामक यह टापू आजाद हुआ। आज यहाँकी ७० प्रतिशत जनसंख्या हिन्दू है तथा इन लोगोंने अपने संस्कारोंको जीवित रखनेके लिये वहाँ प्रतीकरूपमें काशी, गोकुल और ब्रह्मस्थान आदि तीर्थस्थान बसा रखे हैं। मॉरीशसके प्रत्येक गाँवमें भगवान् शंकरके मन्दिर हैं, जहाँ सायंकाल प्रायः ढोलक-मँजीरेके साथ भजन-कीर्तन होता है। सप्ताहमें एक बार तुलसीकृत श्रीरामचरितमानसका पाठ अवश्य ही होता है। यहाँ गङ्गाजी नहीं हैं, अतः यहाँके हिन्दू शिवरात्रिको 'परीतालाब' नामक पवित्र सरोवरमें स्नान करते हैं और उसी सरोवरका जल भगवान् शंकरपर चढ़ाते हैं। उस दिन समस्त हिन्दू श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। इस प्रकार विपरीत परिस्थितियोंमें भी मॉरीशसवासियोंने हिन्दू संस्कार और भारतीय संस्कृतिको अक्षुण्ण बनाये रखा।

एक समय ऐसा था, जबकि अंग्रेज भारतसे हिन्दू धर्म मिटाना चाहते थे। उसके लिये उन्होंने ईसाई पादरियोंको भारत भेजा। ईसाई धर्म ग्रहण करनेवालोंको धन-सम्पत्ति, पद-प्रतिष्ठा दी जाने लगी। हिन्दुओंको बहुत-से प्रलोभन और प्रताड़नाएँ दी गयीं, पर राजनीतिक गुलामीमें भी हिन्दू-संस्कारोंको वे लोग नष्ट नहीं कर सके, बल्कि अब तो स्थिति यह है कि ब्रिटेनमें ही एक छोटा-सा हिन्दुस्तान बस गया है, जहाँ अनेक मन्दिर हैं एवं हिन्दू-संस्कारोंकी शिक्षाके लिये विद्यालय भी हैं। इतना ही नहीं, लीसेस्टरमें बहनेवाली सोर्ज नदीको भारतसे गङ्गाजल ले जाकर पवित्र किया गया, ताकि हिन्दू धर्मावलम्बी अपने सभी संस्कार इस नदीके तटपर कर सकें। चूँकि हिन्दू धर्ममें अन्तिम संस्कार गङ्गाके पावन-तटपर करनेका विधान है, इसलिये यहाँ ऐसा किया गया। इस प्रकार भारतीय संस्कृतिकी धारा और हिन्दू-संस्कारका प्रवाह आज ब्रिटेनको भी आप्लावित कर रहा है। — श्रीबिन्धाप्रसादजी द्विवेदी

जो संसार देखते-देखते ही नष्ट हो रहा है, उसकी ओरसे दृष्टि हटाकर जो रह रहा है और नित्य है, उस परमात्मतत्त्वकी ओर देखना ही यथार्थ दृष्टि है। विचार करना चाहिये, जो प्रतिक्षण नष्ट हो रहा है, वह टिकेगा

कैसे ? ये शरीर, परिस्थिति, मान-बढ़ाई, आदर-सत्कार आदि क्या सदा रह सकेंगे ? मनुष्य इनके रहनेकी ही नहीं, अपितु अधिकाधिक मिलनेकी भी आशा लगाये रहता है, परंतु जो एक क्षण भी स्थिर नहीं रहतीं, वे क्या मिलेंगी और क्या स्थिर रहेंगी ? यदि मनुष्य इस सत्यकी ओर ध्यान दे तो सचमुच कृतकृत्य हो जाय। बस, एक बार इसे ठीक-ठीक समझ लिया जाय तो यह स्वतः ही सब समय दिखायी देने लगेगा—स्मृति-पटलपर निरन्तर अंकित रहेगा।

सूर्य उदय होता है तो उसका अस्त होना भी निश्चित है, इसमें किसीको किंचिन्मात्र भी सन्देह नहीं है; किंतु सूर्यास्त होनेपर क्या हमें दुःख होता है? यद्यपि अँधेरा होनेपर हमारे दैनिक कार्योंमें बाधा आती है, तथापि हमें दुःख या जलन नहीं होती। इसमें मूल कारण हमारी यह धारणा ही तो है कि जब सूर्य उदय हुआ है तो वह अस्त भी अवश्य ही होगा। ठीक इसी प्रकार संसारकी वस्तुएँ अविराम अस्तकी ओर जा रही हैं, यदि हम इस सत्यको स्वीकार कर लें—सचाईसे मान लें तो फिर प्रिय-से-प्रिय वस्तुके वियोगमें भी हमें दुःख नहीं होगा।

भगवान् श्रीकृष्ण भी अर्जुनको इस अनित्यताके विषयमें समझाते हुए कहते हैं—

‘आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥’

(गीता ५।२२)

‘ये सभी पदार्थ आदि-अन्तवाले हैं, अनित्य हैं, अनवरत विनाशकी ओर तेजीसे गतिशील हैं, इनमें बुद्धिमान—विवेकी पुरुष नहीं रमता।’

‘दिन दिन छाँड्या जात है तासों किसा सनेह।’

जो क्षणमात्र भी ठहरते नहीं, उनसे प्रेम कैसे करें ? इनके जानेमें कुछ भी समय नहीं लगता, तब इनसे प्रीति कैसे निभेगी ? ये कुछ देर ठहरें, तब तो प्रीति हो !

हम आशा रखते हैं इस संसारकी, जो वस्तुतः है
ही नहीं और निराश रहते हैं उन परमात्मासे, जो नित्य
Hinduism Discard Server <https://dsc.org/d>
और अविनाशी है— यही महान भूल है। थोड़ा विचार

करें—संसारकी आशासे क्या मिलेगा ? इससे आयु तो व्यर्थ नष्ट हो जायगी और मिलेगा केवल धोखा, परंतु दूसरी ओर यदि परमात्माकी आशा करें तो अवश्य ही परमात्मतत्त्वकी प्राप्ति होगी; क्योंकि वे नित्य और अविनाशी हैं। संसारकी प्राप्ति कठिन ही नहीं, नितान्त असम्भव है। भला, कहीं मृग-मरीचिकासे जलकी प्राप्ति सम्भव है ? जो एक क्षण भी स्थिर नहीं, उसकी प्राप्ति कैसी ? अतः आशा केवल परमात्माकी ही रखनी चाहिये। यदि स्थिरचित्त होकर विचार करें तो वे परमात्मा सबको, सब समय, स्वतः ही प्राप्त हैं। हमने अप्राप्त संसारको प्राप्त मान लिया है, इसलिये हमें नित्य-प्राप्त परमात्मामें अप्राप्तिका भ्रम हो गया है। यह अटल सिद्धान्त है, ठीक ज्यों-का-त्यों इसे देखना है, इसके लिये कोई नया ज्ञान अथवा अनुसन्धान नहीं करना है। इसमें क्या बाधा है ? थोड़ी गम्भीरतासे विचार करें तो पता लग जायगा कि यह कितनी सरल बात है।

इसे एक दृष्टान्तद्वारा समझिये—गंगातटसे थोड़ी ही दूर मार्गकी एक प्यारूपर एक परोपकारी व्यक्ति यात्रियोंको जल पिला रहा है। लोग चलते-चलते रुककर जल पीते हैं, तदनन्तर फिर चलने लगते हैं। वह व्यक्ति प्रत्येकको जल पिलाता है, उसका किसीके साथ न पहलेसे सम्बन्ध है और न जल पिलानेके बाद ही और न वह किसीसे कुछ आशा ही रखता है, उसे तो जल पिलानेमात्रसे ही प्रयोजन है। उपर्युक्त दृष्टान्त मनुष्यमात्रके कर्तव्यका दिग्दर्शन कराता है। संसारके जीवमात्र ही यात्री हैं और हमलोग जल पिलानेवालेकी तरह हैं। हमलोगोंके पास तन, मन, धन, विद्या, बुद्धि, पद एवं अधिकार आदि जो कुछ भी है, वह जल है, जो प्रतिक्षण बहता है, जिसका धर्म ही बहना है। हमलोगोंका तो यही कर्तव्य है कि इस जलको रात-दिन बहनेवाले संसारकी सेवामें लगा दें। इन बहती हुई वस्तुओंसे अविरत बहनेवाले संसारकी सेवा कर देना ही तो कर्तव्य है। राजस्थानी भाषामें एक कहावत है—

तथ्यको स्वीकारमात्र कर लेना है।

एक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक विदेशसे भारत पधारे। उन्होंने किसी भारतीय सन्तसे भेंटकी हार्दिक इच्छा प्रकट की। दर्शनार्थ प्रबन्ध किया गया। वैज्ञानिक महोदयने सन्तसे पूछा—‘आधुनिक विज्ञानके बारेमें आपकी क्या राय है?’ सन्तने कहा—‘मेरी दृष्टिमें इसका कोई मूल्य नहीं।’ चकित एवं व्यथित वैज्ञानिकने कहा—‘जिस विज्ञानने मनुष्यको इतनी सुख-सुविधाएँ प्रदान कीं, उसे आप निरर्थक बता रहे हैं?’ महात्माने कहा—‘आपकी इस वर्णित उपलब्धिसे मैं सहमत हूँ, परंतु विज्ञानकी सबसे बड़ी हार है कि वह मानवको मानवकी भाँति जीना न सिखा सका, परस्पर प्रेम करना, दूसरोंके काम आना, उन्हें सुख बाँटना न सिखा सका। मानवमें मानवता प्रकट करनेकी योग्यता सांसारिक विद्याओंमें नहीं है, यह महान् कार्य परा-विद्या ही कर सकती है।’ चूँकि हमें इन्सानकी भाँति, एक नेक इन्सानकी भाँति रहकर जीवन-यापनकी उत्कट इच्छा है, अतएव दोनों विद्याओंका समन्वय अति आवश्यक है। प्रायः कहते सुना जाता है, ‘अमुक व्यक्ति डॉक्टर तो बहुत अच्छा है, पर इन्सान किसी कामका नहीं, चरित्रहीन है, क्रोधी है, लोभी है।’ गुणवान् बनना तथा दुर्गुणहीन मनुष्य बनना परा-विद्या ही सिखाती है। मानवता अनमोल है।—डॉ० श्रीविश्वामित्रजी

जीवन्मुक्त महात्माके संचित कर्म, संशय, विपर्यय (विपरीत ज्ञान या भ्रान्तियाँ) और क्रियमाण कर्म नष्ट हो जाते हैं, परंतु देहपर्यन्त प्रारब्ध कर्म तो भोगने ही पड़ते हैं। देहपात् होनेपर जीवन्मुक्त महात्माके प्रारब्ध कर्म भी नष्ट हो जाते हैं। इस सम्बन्धमें मुण्डकोपनिषद्

सदानन्द योगीन्द्रकृत 'वेदान्त-सार' नामक पुस्तकमें

जीवन्मुक्तके लक्षणों (श्लोक २१६—२२७)–का वर्णन किया गया है कि ‘जो अपने अखण्ड ब्रह्मस्वरूपका साक्षात्कार कर लेता है तथा अज्ञान और उसके कार्य (संचित कर्म, संशय, भ्रान्तियाँ आदि)–का नाश हो जानेसे समस्त बन्धनोंसे मुक्त हो जाता है, ऐसे ब्रह्मनिष्ठ साधकको जीवन्मुक्त कहते हैं। जीवन्मुक्त महात्मा क्रियमाण कर्मों और भोगे जा रहे प्रारब्ध कर्मफलोंमें सत्यत्व–बुद्धि नहीं रखता। वह नेत्रवाला होकर भी नेत्रहीनके समान है तथा कानोंवाला होकर भी कर्णहीनके समान है और जागते हुए भी सोयेहुएके समान देखता नहीं है। वह केवल अद्वैतमें स्थित होनेके कारण द्वैतको नहीं देखता तथा कर्म करते हुए भी निष्क्रिय है। इस जगत्में निश्चय ही वह आत्मज्ञानी है तथा वह शुभाशुभके प्रति उदासीन रहता है। जीवन्मुक्त महापुरुष अद्वैत तत्त्वको जान लेता है तथा ‘मैं ब्रह्मज्ञानी हूँ’ इस अहंकारको भी त्याग देता है। जीवन्मुक्त महापुरुषको आत्मबोध होता है तथा उसमें अहिंसा, द्वेषहीनता आदि गुण सहजरूपमें होते हैं। वह देहयात्रामात्रके लिये प्रारब्ध फलोंके अनुसार अनासक्त भावसे जीवनयापन करता है तथा प्रारब्धका क्षय हो जानेपर वह अखण्ड ब्रह्ममें स्थित हो जाता है।’ बृहदारण्यकोपनिषद् (४।४।६)–के अनुसार ‘न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति’ अर्थात् ‘जीवन्मुक्त महात्मा (अकाम, निष्काम, आप्तकाम, आत्मकाम)–के प्राणोंका उत्क्रमण नहीं होता, किंतु वह विद्वान् यहीं ब्रह्मरूप हो जाता है।’ बृहदारण्यकोपनिषद् (३।२।११)–में कहा गया है कि ‘जीवन्मुक्त महात्मा तत्त्वज्ञ होता है। देहपातके पश्चात् बन्धनका नाश हो जानेपर मुक्तपुरुषका कहीं गमन नहीं होता तथा उसके प्राण परमात्माके साथ अभेदको प्राप्त हो जाते हैं।’ कठोपनिषद् (२।२।१)–के अनुसार ‘विमुक्तश्च विमुच्यते’ अर्थात् ‘जीवन्मुक्त महापुरुष इस शरीरके रहते हुए ही कर्मबन्धनसे मुक्त हुआ ही मुक्त हो जाता है।’

जीवन्मुक्त महापुरुषकी जीवनचर्या— श्रीमदाद्य-
शंकराचार्यविरचित ‘विवेकचूडामणि’के अनुसार ‘जीवन्मुक्त
महात्मा विषयोंके प्राप्त होनेपर न दुखी होता है, न

महाराज विश्वामित्र—राजर्षिसे ब्रह्मर्षि

(आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा)

गीताके सोलहवें अध्यायमें काम, क्रोध तथा लोभको आसुरी सम्पत्ति बताते हुए भगवान् कहते हैं 'काम, क्रोध तथा लोभ—ये तीन प्रकारके नरकके द्वार आत्माका नाश करनेवाले अर्थात् उसको अधोगतिमें ले जानेवाले हैं। अतएव इन तीनोंको त्याग देना चाहिये। इन तीनों नरकके द्वारोंसे मुक्त पुरुष अपने कल्याणका आचरण करता है, इससे वह परमगतिको जाता है अर्थात् मुझको प्राप्त हो जाता है।'

महाराज विश्वामित्रका जीवन मनुष्यके इन्हीं तीन विकारोंपर विजय प्राप्त करनेका अभियान है, जिन्होंने कठोर तपस्याके द्वारा इन्द्रियसंयमकर ब्रह्मका साक्षात् कर लिया। वे भोगोंसे सम्पन्न विलासितापूर्ण क्षत्रिय जीवनसे विरक्त हो ज्ञानी मुनियोंके श्रेष्ठ मार्गपर आ गये, जहाँ इन विकारोंसे जूझते हुए अन्ततः ब्रह्मर्षिका परमपद प्राप्त कर लिया।

महाभारतके अनुशासनपर्वमें युधिष्ठिर भीष्मसे पूछते हैं—पितामह! यदि तीनों वर्णोंके मनुष्योंके लिये ब्राह्मणत्व प्राप्त करना कठिन है तो महात्मा विश्वामित्र क्षत्रिय होकर भी ब्राह्मण कैसे हो गये? भीष्मजीने कहा—युधिष्ठिर! पूर्वकालमें विश्वामित्रजी क्षत्रिय होकर भी जिस प्रकार ब्राह्मण तथा ब्रह्मर्षि हुए, उस प्रसंगको तुम यथार्थ रूपसे सुनो। भरतवंशमें एक अजमीढ़ नामक राजा हुए थे, उनके पुत्र महाराज जह्नु थे, जिन्होंने गंगाजीको अपनी पुत्री बनाया था। जह्नुका पुत्र सिन्धुद्वीप और सिन्धुद्वीपका पुत्र बलाकाश्व था। उससे वल्लभका जन्म हुआ। वल्लभके इन्द्रके समान कान्तिमान् एक पुत्र हुआ, जिसका नाम कुशिक था। कुशिकके पुत्र महाराज गाधि हुए। उनके कोई पुत्र नहीं था, इसलिये वे सन्तानकी इच्छासे वनमें रहकर यज्ञानुष्ठान करने लगे। वहाँ यज्ञसे उन्हें एक सत्यवती नामकी अनुपम सुन्दरी कन्या प्राप्त हुई। सत्यवतीका राजा गाधिने च्यवनके पुत्र ऋचीकमुनिके साथ विवाह कर दिया। ऋचीकमुनिने सत्यवतीके व्यवहारसे प्रसन्न होकर उसे वरदान देनेकी

इच्छा प्रकट की। राजकन्याने यह समाचार अपनी मातासे कहा तो माताने कहा—बेटी! तुम्हारे पतिको मुझपर भी कृपा करनी चाहिये। वे तपस्याके बलपर सर्वसमर्थ हैं। ऋचीकमुनिने सत्यवतीसे कहा—मेरी कृपासे तुम्हारी माताको शीघ्र ही एक गुणवान् पुत्रकी प्राप्ति होगी और तुम्हें भी एक गुणवान् पुत्र उत्पन्न होगा। तुम्हारी माता ऋतुस्नानके पश्चात् पीपलके वृक्षका आलिंगन करे और तुम गूलरके वृक्षका, इससे तुम दोनोंको पुत्रकी प्राप्ति होगी। मुनिने दो अलग-अलग



मन्त्रपूत चरु भी दोनोंके खानेके लिये दिये। किंतु माताके कहनेपर सत्यवतीने वृक्ष और चरु अदल-बदल लिये। महर्षि ऋचीकने जब गर्भवती सत्यवतीकी ओर दृष्टिपात किया तो समझ गये कि चरु और वृक्षकी अदला-बदली हुई है। उन्होंने सत्यवतीसे कहा यह तुमने अच्छा नहीं किया है। मैंने तुम्हारे चरुमें सम्पूर्ण ब्रह्मतेजका सन्निवेश किया था तथा तुम्हारी माताके चरुमें समस्त क्षत्रियोचित शक्तिकी स्थापना की थी। अब तुम तो कठोर कर्मवाले क्षत्रियको जन्म दोगी और तुम्हारी माता उत्तम ब्राह्मणको जन्म देगी। सत्यवतीने शोकसे सन्तप्त होकर पतिके

राजा विश्वामित्रने महर्षि वसिष्ठसे कहा—‘ब्रह्मन्! आप स्वयं मेरे पूजनीय हैं तो भी आपने मेरा पूजन किया, भलीभाँति आदर-सत्कार किया। भगवन्! अब मैं एक बात कहता हूँ। आप मुझसे एक लाख गौएँ लेकर यह चितकबरी गाय मुझे दे दीजिये; क्योंकि यह गौ रत्नरूप है और रत्न लेनेका अधिकारी राजा होता है।’ विश्वामित्रके ऐसा कहनेपर महर्षि वसिष्ठने राजाको उत्तर देते हुए कहा—‘नरेश्वर! मैं एक लाख या सौ करोड़ अथवा चाँदीके ढेर लेकर भी बदलेमें इस शबला गौको नहीं दे सकता। यह मेरे पाससे अलग होनेयोग्य नहीं है। मेरा यह सब कुछ इस गौके ही अधीन है, मैं सच कहता हूँ—यह गौ ही मेरा सर्वस्व है और यही मुझे सब प्रकारसे सन्तुष्ट करनेवाली है। राजन्! बहुतसे ऐसे कारण हैं, जिनसे बाध्य होकर मैं यह शबला गौ आपको नहीं दे सकता।’ विश्वामित्रने अनेक प्रलोभन दिये किंतु मुनि वसिष्ठने अपना निश्चय सुनाया कि मैं इस कामधेनुको कदापि नहीं दूँगा। तब राजा विश्वामित्रकी आज्ञासे उसके सैनिक उस धेनुको बलपूर्वक घसीटने लगे। शोकाकुल गौने ब्रह्मर्षिके सामने याचना की कि क्या आपने मुझे त्याग दिया, जो ये राजाके सैनिक मुझे आपके पाससे दूर लिये जा रहे हैं? ब्रह्मर्षि वसिष्ठने कहा—‘शबले! मैं तुम्हारा त्याग नहीं करता। तुमने मेरा कोई अपराध नहीं किया है। ये महाबली राजा अपने बलसे मतवाले होकर तुमको मुझसे छीनकर ले जा रहे हैं।’ कामधेनुने महायशस्वी वसिष्ठसे आज्ञा पाकर अनेक सैनिकोंकी सृष्टि की तथा विश्वामित्रकी सेनाका संहार कर डाला। महात्मा वसिष्ठद्वारा अपनी सेनाका संहार हुआ देख विश्वामित्रके सौ पुत्र अत्यन्त क्रोधमें भरकर अस्त्र-शस्त्र लेकर वसिष्ठमुनिपर टूट पड़े। महर्षिने हुंकारमात्रसे उन सबको जलाकर भस्म कर

सृजित नक्षत्रोंको सदा बना रहनेका अनुमोदन करें। देवताओंने तथास्तु कहकर कहा कि आपके द्वारा सृजित नक्षत्र आकाशमें सदैव प्रकाशित होंगे, उनके ही बीचमें त्रिशंकु भी प्रकाशमान रहेंगे। इनकी स्थिति देवगणोंके समान होगी और ये सभी नक्षत्र इनका अनुसरण करेंगे। तदनन्तर देवता, मुनि विश्वामित्रकी स्तुतिकर विदा हो गये। महातेजस्वी विश्वामित्र अब पश्चिम दिशामें ब्रह्माजीद्वारा निर्मित पुष्करमें चले गये और वहाँ उग्र एवं दुर्जय तपस्या करने लगे। पुष्करतीर्थमें एक हजार वर्षोंतक तीव्र तपस्या करनेपर सम्पूर्ण देवता उन्हें तपस्याका फल देनेकी इच्छासे ब्रह्माजीके साथ आये। ब्रह्माजीने कहा—‘मुने! तुम्हारा कल्याण हो। अब तुम अपने द्वारा उपार्जित शुभकर्मोंके प्रभावसे ऋषि हो गये। ऐसा कहकर ब्रह्माजी पुनः स्वर्गको चले गये। मुनि विश्वामित्र भी पुनः बड़ी भारी तपस्यामें लग गये। इसके पश्चात् बहुत समय बीतनेपर इन्द्रद्वारा भेजी गयी परम सुन्दरी अप्सरा मेनका पुष्करमें आयी और विश्वामित्रमुनिको मोहित करने लगी। विश्वामित्रजी कामके अधीन हो गये। उनकी तपस्यामें विघ्न आ गया। मेनकाने विश्वामित्रजीके साथ उस आश्रममें दस वर्ष बिताये।

महामुनि विश्वामित्र जब कामजनित मोहसे जागे तो पश्चात्ताप करने लगे। मेनका भयभीत हो थर-थर काँपती हुई हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ी हो गयी। उसकी ओर देखकर विश्वामित्रजीने मधुर वचनोंद्वारा उसे विदा कर दिया और स्वयं उत्तरमें स्थित हिमालयकी ओर चले गये। वहाँ उन महायशस्वी मुनिने निश्चायात्मक बुद्धिका आश्रय लेकर कामदेवको जीतनेके लिये कौशिकी तटपर जाकर दुर्जय तपस्या की। एक हजार वर्षोंतक तपस्या करनेके पश्चात् प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने उन्हें पुनः दर्शन दिये और उन्हें महर्षिकी पदवी प्रदान की और कहा—‘महर्षे! तुम्हारा स्वागत है। वत्स कौशिक! मैं तुम्हारी उग्र तपस्यासे बहुत सन्तुष्ट हूँ और तुम्हें महत्ता एवं ऋषियोंमें श्रेष्ठता प्रदान करता हूँ।’

कहा—‘भगवन्! यदि अपने द्वारा उपार्जित शुभ कर्मोंके फलसे मुझे आप ब्रह्मर्षिका अनुपम पद प्रदान कर सकें तो मैं अपनेको जितेन्द्रिय समझूँगा।’ ब्रह्माजीने कहा—‘मुनिश्रेष्ठ! अभी तुम जितेन्द्रिय नहीं हुए हो। इसके लिये प्रयत्न करो।’ विश्वामित्र पुनः घोर तपस्यामें लग गये। वे दोनों भुजाएँ ऊपर उठाये बिना किसी आधारके खड़े होकर वायु पीकर रहते हुए तपमें संलग्न हो गये। गर्मीके दिनोंमें पंचाग्निका सेवन करते, वर्षाकालमें खुले आकाशके नीचे रहते और जाड़ेके समय रात-दिन पानीमें खड़े रहते थे। इस प्रकार उन्होंने एक हजार वर्षोंतक घोर तपस्या की। उन्हें तपस्या करते देख देवताओं और इन्द्रके मनमें बड़ा भारी सन्ताप हुआ। इन्द्रने रम्भा अप्सराको बुलाकर विश्वामित्रमुनिको मोहित करनेके लिये कहा। रम्भाने कहा—‘सुरपते! महामुनि विश्वामित्र बड़े भयंकर हैं। देव! इसमें सन्देह नहीं कि ये मुझपर भयानक क्रोधका प्रयोग करेंगे।’ इन्द्रने कहा—‘डरो मत! मैं भी कामदेवके साथ तेरे पास रहूँगा। सुन्दरी अप्सराने परम उत्तम रूप बनाकर विश्वामित्रको लुभाना आरम्भ किया। मुनिको देवराजका कुचक्र समझमें आ गया। उन्होंने क्रोधमें भरकर रम्भाको शाप देते हुए कहा—‘दुर्भगे रम्भे! मैं काम और क्रोधपर विजय पाना चाहता हूँ और तू आकर मुझे लुभाती है। अतः इस अपराधके कारण तू दस हजार वर्षोंतक पत्थरकी प्रतिमा बनकर खड़ी रहेगी। शापका समय पूरा हो जानेके बाद एक महान् तेजस्वी और तपोबलसम्पन्न ब्राह्मण (ब्रह्माजीके पुत्र वसिष्ठ) मेरे क्रोधसे कलुषित तेरा उद्धार करेंगे।’ मुनिके उस महाशापसे रम्भा तत्काल पत्थरकी प्रतिमा बन गयी। महर्षिका वह शापयुक्त वचन सुनकर कन्दर्प और इन्द्र वहाँसे खिसक गये।

क्रोधसे मुनिकी तपस्याका क्षय हो गया और इन्द्रियाँ भी काबूमें न रह सकीं। यह विचारकर महातेजस्वी मुनि अशान्त हो गये। उन्होंने निश्चय किया ‘अबसे न तो क्रोध करूँगा और न किसी भी अवस्थामें

इन्होंने गायत्री-साधनाद्वारा काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि शत्रुओंको जीत लिया तथा तपस्याके मूर्तिमान् आदर्श बन गये।

स्वस्थ व्यक्तिके स्वास्थ्यकी रक्षाके हेतु रसायन-चिकित्साका विधान है। शरीरकी रसादि धातुएँ जिससे उत्तम रूपमें बनती रहें, शरीर स्वस्थ रहे तथा अकाल, जरा एवं व्याधि जिस उपायसे दूर रहे, उसे रसायन कहते हैं। महर्षि चरकने रसायन-प्रकरणमें आचार-रसायनका निरूपण किया है। सदाचारके परिपालनसे व्यक्ति बिना औषधके ही रसायनके सभी गुण प्राप्त कर लेता है। आचार्यने आचार-रसायनमें जप, देवपूजन, अध्यात्म-

पीड़ित, विषादग्रस्त, शिथिल, भयभीत तथा भयानक रोगोंमें पड़े हुए मनुष्य भी एकमात्र नारायण-नामका कीर्तन करके समस्त दुःखोंसे छूटकर सुखी हो जाते हैं।

दोष कैसे दूर हों ?

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

प्राणीके अन्तःकरणमें जिन दोषोंके कारण अशुद्धि या मलिनता है, वे दोष कहीं बाहरसे आये हुए नहीं हैं, स्वयं उसीके बनाये हुए हैं। अतः उनको निकालकर अन्तःकरणको शुद्ध बनानेमें यह सर्वथा स्वतन्त्र है।

मनुष्य सोचता है और कहता है कि 'मेरे प्रारब्ध ही कुछ ऐसे हैं, जो मुझे भगवान्की ओर नहीं लगाने देते, मुझपर भगवान्की कृपा नहीं है। आजकल समय बहुत खराब है। सत्संग नहीं है। आसपासका वातावरण अच्छा नहीं है। शरीर ठीक नहीं रहता। परिवारका सहयोग नहीं है। अच्छा गुरु नहीं मिला। परिस्थिति अनुकूल नहीं है। एकान्त नहीं मिलता। समय नहीं मिलता' आदि, इसी प्रकारके अनेक कारणोंको वह ढूँढ़ लेता है, जो उसे अपने आध्यात्मिक विकासमें रुकावट डालनेवाले प्रतीत होते हैं। और इस मिथ्या धारणासे या तो वह अपनी उन्नतिसे निराश हो जाता है या इस प्रकारका सन्तोष कर लेता है कि भगवान्की जैसी इच्छा, वे जब कृपा करेंगे, तभी उन्नति होगी। परंतु वह अपनी असावधानी तथा भूलकी ओर नहीं देखता।

साधकको सोचना चाहिये कि जिन महापुरुषोंने भगवान्की इच्छापर अपनेको छोड़ दिया है, उनके जीवनमें क्या कभी निरुत्साह और निराशा आती है? क्या वे किसी भी परिस्थितिमें भगवान्के सिवा किसी व्यक्ति या पदार्थको अपना मानते हैं? उनके मनमें क्या किसी प्रकारकी भोग-वासना शेष रहती है? यदि नहीं, तो फिर अपने बनाये हुए दोषोंके रहते भगवान्की इच्छाका बहाना करके अपने मनमें झूठा सन्तोष मानना या आध्यात्मिक उन्नतिमें दूसरे व्यक्ति, परिस्थिति आदिको बाधक समझना अपने-आपको और दूसरोंको धोखा देनेके सिवा और क्या है?

यह सोचकर साधकको यह निश्चय करना चाहिये कि भगवान्‌की प्रकृति जो कि जगत्-माता है, उसका विधान सदैव हितकर ही होता है, वह किसी विकारमय

रुकावट नहीं डालती, वरं सहायता ही करती रहती है। कोई भी व्यक्ति या समाज किसीके साधनमें बाधा नहीं डाल सकता। कोई भी परिस्थिति ऐसी नहीं है, जिसका सदुपयोग करनेपर वह साधनमें सहायक न हो। भगवान्‌की कृपाशक्ति तो सदैव सब प्राणियोंके हितमें लगी हुई है। जब कभी मनुष्य उसके सम्मुख हो जाता है, उसी समय उसका हृदय भगवान्‌की कृपासे भर जाता है।

साधकको चाहिये कि उसका अपना बनाया हुआ जो यह महान् दोष है कि जिनसे अपना कोई सम्बन्ध नहीं है, जो किसी प्रकार भी अपने नहीं हो सकते, उन मन, बुद्धि और इन्द्रियोंके संघातरूप शरीरको और उससे सम्बन्धित पदार्थोंको अपना मान लिया है तथा जिनपर किसी प्रकार भी विश्वास नहीं करना चाहिये, उनपर विश्वास कर लिया है एवं जिन परम सुहृद् परमेश्वरपर विश्वास करना चाहिये, जो सब प्रकारसे विश्वासके योग्य हैं और सजातीय होनेके नाते जो सचमुच सब प्रकारसे अपने हैं, उनपर न तो विश्वास करता है न उन्हें अपना मानता है और न वर्तमानमें उनकी आवश्यकताका ही अनुभव करता है। यही एक ऐसा महान् दोष है, जिससे सब प्रकारके बड़े-बड़े दोष उत्पन्न हुए हैं और होते रहते हैं। अतः इस दोषका सर्वथा त्याग कर देना चाहिये।

यह दोष मनुष्यका अपना बनाया हुआ है। इसलिये स्वयं ही इसे दूर करना पड़ेगा। अपने बनाये हुए दोषको दूर करनेमें कोई भी साधक असमर्थ नहीं हो सकता। इसपर भी यदि उसे अपनी कमजोरीका भान हो, यदि वह अपनेको सचमुच असमर्थ समझता हो तो उसे निर्बलताके दुःखसे दुखी होकर उस सर्वसमर्थ प्रभुकी शरणमें जाना चाहिये, जो निर्बलोंके बल हैं, पतितोंको पवित्र बनानेवाले और दीनबन्धु हैं। निर्बलताके दुःखसे दुखी साधकको उस निर्बलताका नाश होनेसे पहले चैन

arma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

कैसे पड़ सकता है ?

यदि सम्भव हो तो सात दिनमें एक बार, जिनसे स्वभाव मिलता हो—ऐसे सत्संगी भाइयोंके साथ बैठकर आपसमें विचार-विनिमय करे और उनके सामने अपने दोषोंको बिना किसी संकोच तथा छिपावके स्पष्ट शब्दोंमें प्रकट कर दे तथा उनको हटानेके लिये उनसे परामर्श ले। ऐसा करनेसे साधकके दोष शीघ्र ही मिट सकते हैं।

सन्त-चरित—

सन्त श्रीमुण्डिया स्वामी

(श्रीरतिभाईजी पुरोहित)



गुजरातमें जूनागढ़ जिलेके भेसाण शहरके पास डमरा नामका एक छोटा-सा गाँव है। इस गाँवमें यजुर्वेदीय माध्यन्दिनी शाखाके शाण्डिल्यगोत्री सोरठी श्रीगौड़ मालवीय परमपवित्र, अयाचक व्रतधारी शुद्ध ब्राह्मणदम्पती काशीराम वेलजी भट्ट और पानबाई रहते थे।

इस द्विज परिवारमें सं० १९१० भाद्र शुक्ल दशमी दिनांक २ सितम्बर १८५४ ई० गुरुवारको ब्राह्म मुहूर्तमें एक बालकका जन्म हुआ। नाम रखा गया दयाराम। दयारामजीने यज्ञोपवीत-संस्कारके बाद ग्राम्य पाठशालामें शिक्षा प्राप्तकर गाँवके जमींदार वापी दरबार शेर जुमाखानजीके दरबारमें हवलदारकी नौकरी शुरू की।

नामके रूप दयाभावसे भरे दयारामजी हवलदारकी नौकरीके साथ गाँवमें भिक्षावृत्ति करते और उससे जो कुछ प्राप्त होता, उससे रैवतक गिरनारपर्वतकी दर्शन-यात्रा करके आने-जानेवाले साधु-सन्त-महात्माओंको भोजन कराते और बैठकर भजन-कीर्तन करते-कराते थे।

गाँवमें एक प्रजापति कुमार भगत थे। वे

हर साल गिरनारकी परिक्रमा-यात्रा (जो यहाँ लीली परिक्रमाके नामसे जानी जाती है) में जाते थे और आते समय सन्त-महात्माओंकी मण्डली भी साथमें लाते थे। दयारामजी उनके साथ रातभर बैठकर भजन गाया करते थे। दयारामजीकी स्वरलहरी बड़ी ही मधुर थी। उन्हें भजन गाना और भजन बनाना बड़ा प्रिय था। उनके बनाये हुए ५००से अधिक भजन मिलते हैं, जो लगभग सौ वर्ष पहले प्रकाशित उनकी 'मनप्रबोध-भजनावली' (गुजराती) पुस्तकमें संकलित हैं। यह भजनावली इस लेखके लेखकके पास आज भी है। उन्होंने अन्य भी कई पुस्तकें लिखी हैं, यथा—ब्रह्मगायत्री, गायत्री-अक्षर-चौबीसी, कुदरत-कला, मोक्ष-सोपान, ब्रह्मविलास, शिष्यधर्मोपदेशिका आदि। ये सभी पुस्तकें प्रायः अप्राप्य हैं।

दयारामजीकी शादी माणेकबाईके साथ हुई। उनके एक बेटा महाशंकर और तीन बेटी संतोकबेन, प्रेमबेन और कडवीबेन हुए।

दयारामजीको साधुसंगसे भक्तिका रंग चढ़ गया था। दयारामजी अपने गाँवके नजदीक सुप्रसिद्ध सन्त अमर देवीदास परष (भेसाण) और एक बुढ़े बाबाजीके धूने (अग्निकुण्ड)-की जगह आया-जाया करते थे।

उनके गाँवके कुमार भगतके घर एक गिरनारी सन्त महात्मा आये। सन्तने द्विज परिवारके तेजस्वी पुत्र दयारामका दिव्य तेज देखकर कहा—बेटा दया! तू दया नहीं, परम दयाका सागर है। तेरा काम दूसरेका कल्याण करना और भूखे लोगोंको खिलाना है। प्रभुकी भक्ति करना है, बन्दूक बाँधकर दरबारी हवलदारी करना नहीं है, दरबारकी हवलदारी छोड़, प्रभुकी हवलदारी कर। तेरा बेड़ा पार हो जायगा। सन्तके उपदेशका दयारामजीपर गहरा असर हुआ। 'सर्वसङ्गविनिर्मुक्त समचित्तो बभूव ह'—सबका संग त्यागकर ब्रह्मनिष्ठ हो गये। दयारामने प्रभुसे माँगा—'भगवत्यच्युतां भक्ति'—हे प्रभु! भगवान् और भक्तोंमें मेरी सदा निश्चल भक्ति बनी रहे।

स्वामीजी अपनी साधु-मण्डलीके साथ कहीं भी, किसी भी समय पहुँच जाते थे और बिना भोजन-प्रसादके बरतनपर 'जय अन्नपूर्णा माँ', 'जय गुरुदेव' कहकर अपना एक वस्त्र ढक देते थे। भोजन-प्रसाद सबको पूरा हो जाता था। अन्नपूर्णाका भण्डार अक्षुण्ण हो जाता था। यही अन्नपूर्णा माँके प्रसन्न होनेका उद्‌घरण है। स्वामीजी कहते थे—

स्वामीजी कच्छ-रापरसे अंजार सातश्मशानभूमिमें
Hinduism Discard Server <https://dsc.gg/dl>
आया। यहाँ कच्छका प्रसिद्ध सन्त जसल तास्यका

बाबा कुछ क्षण मौन रहनेके बाद पुनः बोले, 'शुद्धिका लक्ष्य तमाम विकृतियोंसे मुक्त होनेका संकल्प लेना है। विकृतियाँ एवं अवगुण ही तो मानवके सच्चे विकासमें अवरोध पैदा करते हैं।' बाबाजीके चंद शब्दोंने स्वामीजीकी जिज्ञासाको शान्त कर दिया। [स्वामी श्रीजगदेवानन्दजी]

गोसेवाके फलस्वरूप प्राण-रक्षा

यह घटना लगभग चालीस वर्ष पूर्वकी है। मैं देशनोक करणीधामका निवासी हूँ। मात्र २१ वर्षकी छोटी उम्रमें मुझे दमाकी शिकायत हो गयी थी और लगभग ३५ वर्षतक इस बीमारीसे पीड़ित रहा हूँ। मैं २० वर्षसे भी अधिक समयसे श्रीकरणी-गौशालासे सम्बद्ध रहा हूँ।

घटना विक्रम-संवत् २०३६ फाल्गुनकी है। मैंने नित्यकी भाँति भगवान्का नाम लेकर रात्रि ८ बजे गोशालाके मन्त्रीके साथ चंदेके लिये प्रस्थान किया। लेकिन जब मैं घरसे रवाना हुआ तो अचानक मेरी तबीयत खराब हो गयी। मेरी बिगड़ती स्थिति देखकर मेरी माताजीने मुझसे कहा कि तुम शीघ्र ही इलाजके लिये जयपुर चले जाओ, और मैं जयपुरके लिये रवाना हो गया। रास्तेमें सोचा, पहले मन्दिरमें माताजीके दर्शन करता चलूँ।

जब मैं करणी माताजीके मन्दिर दर्शनार्थ पहुँचा तो उस समय ज्योति जल रही थी। मैं श्रद्धावन्त हो माँकी स्तुतिमें ध्यानमग्न हो गया और जब ध्यान टूटा तो श्रीमाँके चरणोंमें स्वच्छ धवल देदीप्यमान एक ज्योति-पुंजका दर्शन हुआ, जिसे लोग बहुत शुभ मानते हैं। मनमें ऐसा लगने लगा कि कोई चमत्कार होनेवाला है। फिर वहाँसे मैं जयपुरके लिये चल दिया। रेलमें बुखार होने लगा तथा दमाकी शिकायत भी बढ़ती गयी और जयपुर पहुँचते-पहुँचते बुखार १०४ तक पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर तीन दिनतक अच्छे-अच्छे डॉक्टरोंसे इलाज कराया, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। तीन दिन बाद मैंने बीकानेरके एक विशेषज्ञ डॉक्टरको दिखाया, फिर भी कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। स्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रही। अब मुझे ऐसा महसूस होने लगा कि मैं बच नहीं पाऊँगा।

मैं अस्पतालमें जिस बेडपर सोया था, उसके सिराहने दीवालपर भगवान् लड्डू-गोपालकी तस्वीर लगी हुई थी और ठीक सामनेकी तरफ भगवान् शंकरकी ‘**सत्यं शिवं सुन्दरम्**’ की चन्द्राकार तस्वीर लगी हुई थी, जिसमें भगवान् शंकरका विश्राम करते हुए चित्र था। मैंने

भगवान् कृष्णकी तरफ देखते हुए कहा—‘कन्हैया, मुझे मरनेकी चिन्ता नहीं है। परन्तु यह उचित समय नहीं है, यदि तुम ले जाना चाहो तो तैयार हूँ। क्योंकि मैं इस असहनीय कष्टसे ऊब गया हूँ।’ इस प्रकार कहते हुए ज्यों ही भगवान्को नमस्कार किया, त्यों ही मैं बेहोश हो गया। देखभालके लिये आये हुए पारिवारिक जन रोने लगे और तुरन्त प्रसिद्ध संतोक्बा दुर्लभजी हॉस्पिटल उपचारके लिये मुझे लोग ले गये, वहाँ पहुँचनेसे पहले ही मेरी धड़कन लगभग बन्द—सी हो गयी। अत्यन्त घबराहटके साथ बार—बार लोग धड़कन सुननेकी चेष्टा करने लगे। अन्तमें मेरे भाईने निराश होकर मेरे बड़े लड़केसे कहा कि अब इन्हें घरपर ले चलो, क्योंकि अब डॉक्टर कुछ नहीं कर सकते। परन्तु मेरे लड़केने बड़ी ही दृढ़तासे कहा कि एक बार तो हॉस्पिटल अवश्य ले जायँगे, फिर भगवान्की जैसी कृपा।

मुझे इमरजेन्सी वार्डमें ले जाया गया। जब डॉक्टर ऑक्सीजन लगाने लगे तो ऑक्सीजन नहीं लगी। डॉक्टरने निराश होकर कहा कि इनके जीवनका कोई लक्षण नहीं दिखायी दे रहा है। परिवारवाले रोने लगे। सब लोग बड़ी ही कातर-दृष्टिसे आशा लगाये हुए बार-बार डॉक्टरकी ओर देखने लगे। ठीक उसी समय किसी लक्षण-विशेषसे डॉक्टरको कुछ आशा जगी और उसने पुनः ऑक्सीजन लगा दी। इधर परिवारवाले भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करने लगे। कुछ देर बाद मेरे दिलकी धड़कन वापस आ गयी। अनवरत इलाज चलनेके तीन घण्टेके बाद मुझे होश आया और मैं पूर्ण स्वस्थ हो गया। मैं तो इसे वर्षोंसे गोशालाकी व्यवस्था एवं गोसेवा करनेका ही प्रत्यक्ष फल समझता हूँ। गौमाताकी सेवा और गोपाल श्रीकृष्णकी कृपासे मुझे एक नया जीवन मिला और साथ ही साथ मेरे दमेकी शिकायत भी धीरे-धीरे कम हो गयी और अब मैं अपने परिवारके साथ सुखमय जीवन व्यतीत कर रहा हूँ।—गोकलचंद कास्ट

साधनोपयोगी पत्र

पति ही स्त्रीका गुरु है

प्रिय महोदय! सादर हरिस्मरण। आपका पत्र होते हैं।'

मिला। धन्यवाद। आपके प्रश्नोंका उत्तर इस प्रकार है—

(१) पुरुषको ही गुरुकी शरणमें जाकर आत्मज्ञानका उपदेश लेना चाहिये, इसके लिये आप प्रमाण चाहते हैं। प्रमाण बहुत हैं, सबका संग्रह करनेसे पत्रका कलेवर बड़ेगा, अतः दो-एक प्रमाण उपस्थित करते हैं—
मुण्डकोपनिषद्के मन्त्र (१।२।१२)—में कहा गया है—

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्।

अर्थात् 'उस नित्य वस्तुका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये वह जिज्ञासु पुरुष गुरुकी ही शरण ले।'

मुण्डकोपनिषद्के ही मन्त्र (१।२।१३)—में कहा गया है कि गुरु उस शरणागत एवं शम-दम-सम्पन्न शिष्यको ब्रह्मविद्याका उपदेश करे—

तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक्

प्रशान्तचित्ताय शमान्विताय।

येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं

प्रोवाच तां तत्त्वतो ब्रह्मविद्याम्॥

उक्त दोनों स्थलोंमें शिष्यके लिये पुल्लिङ्ग विशेषण आये हैं। स्त्रीलिङ्ग विशेषण कहीं नहीं आया है। इससे पूर्वोक्त बातकी सिद्धि होती है। उपनिषदोंमें जितनी आख्यायिकाएँ आयी हैं, उनमें सब जगह पुरुष ही विभिन्न सद्गुरुकी शरण हुए बताये गये हैं, कहीं भी स्त्री शिष्यने तत्त्वज्ञानके लिये किसी गुरुकी शरण ली हो, यह नहीं आया है।

(२) गीतामें स्त्रियोंके लिये जो परम गतिकी प्राप्ति बतायी गयी है, वह भगवान्की शरणमें जानेसे होती है।

भगवान्ने (गीता ९।३२)—में श्रीमुखसे कहा है—

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।

स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्॥

'हे अर्जुन! मेरी शरण लेकर जो पापयोनि जीव हैं, वे तथा स्त्री, वैश्य एवं शूद्र भी परम गतिको प्राप्त

भगवान् सबके अन्तरात्मा हैं, प्रियतम हैं, पति हैं तथा सद्गुरु हैं; अतः उनकी शरण लेनेसे स्त्रीके सतीत्वपर कोई आँच नहीं आती। परंतु जो पर-पुरुष यति, गृहस्थ अथवा विरक्त हैं, उनकी शरण लेनेसे स्त्रीके सतीधर्मकी मर्यादाको ठेस पहुँचती है। अतः स्त्री भगवान्की उपासना तो कर सकती है, परंतु किसी पर-पुरुषको गुरु नहीं बना सकती। इसीलिये मैत्रेयीने अपने पति याज्ञवल्क्यजीसे ही तत्त्वज्ञानका उपदेश लिया। उन्होंने किसी दूसरे साधुको गुरु नहीं बनाया था।

(३) 'पत्नीको पतिसेवासे ही सब कुछ मिल जाता है।' इस कथनके लिये प्रमाणोंकी कमी नहीं है। मनुस्मृतिमें लिखा है कि 'वैवाहिक विधि ही स्त्रियोंके लिये वैदिक संस्कार है। पतिकी सेवा ही उनके लिये गुरुकुलवास है तथा घरका काम-काज ही उनके लिये अग्निहोत्र है।'

यथा—

वैवाहिको विधिः स्त्रीणां संस्कारो वैदिकः स्मृतः।

पतिसेवा गुरौ वासो गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया॥

(२।६७)

स्त्रियोंके लिये अलग व्रत, यज्ञ और उपवासकी विधि नहीं है, वह जो पतिसेवा करती है, उसीसे स्वर्ग-लोकमें पूजित होती हैं—

नास्ति स्त्रीणां पृथग् यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणम्।

पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते॥

(मनु० ५।१५५)

विष्णुपुराणमें वेदव्यासने महर्षियोंसे कहा—'नारी अपने पतिके हितमें संलग्न रहकर यदि मन, वाणी तथा कर्मसे उनकी सेवा करे तो अधिक क्लेश सहन किये बिना ही पतिरूप परमेश्वरका सालोक्य (उनके परम धाममें निवास) प्राप्त कर लेती है—

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें ११।८ बजेतक	शनि	ज्येष्ठा दिनमें ४।१० बजेतक	६ जून	धनुराशि दिनमें ४।१० बजेसे।
द्वितीया " ९।५९ बजेतक	रवि	मूल " ३।३९ बजेतक	७ "	मूल दिनमें ३।३९ बजेतक।
तृतीया " ९।१९ बजेतक	सोम	पू०षा० " ३।३६ बजेतक	८ "	भद्रा दिनमें ९।३९ बजेसे रात्रिमें ९।१९ बजेतक, मकरराशि रात्रिमें ९।४२ बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।२५ बजे, मृगशिराका सूर्य प्रातः ६।२४ बजे।
चतुर्थी " ९।९ बजेतक	मंगल	उ०षा० " ४।१ बजेतक	९ "	× × × ×
पंचमी " ९।३० बजेतक	बुध	श्रवण सायं ४।५८ बजेतक	१० "	× × × ×
षष्ठी " १०।२१ बजेतक	गुरु	धनिष्ठा " ६।२५ बजेतक	११ "	भद्रा रात्रिमें १०।२१ बजेसे, कुम्भराशि प्रातः ५।४२ बजेसे, पंचकारम्भ प्रातः ५।४२ बजे।
सप्तमी " ११।३८ बजेतक	शुक्र	शतभिषा रात्रि ८।१८ बजेतक	१२ "	भद्रा दिनमें १०।५९ बजेतक।
अष्टमी " १।१८ बजेतक	शनि	पू०भा० " १०।३३ बजेतक	१३ "	मीनराशि दिनमें ३।५९ बजेसे, श्रीशीतलाष्टमी।
नवमी " ३।१४ बजेतक	रवि	उ०भा० " १।४ बजेतक	१४ "	मूल रात्रिमें १।४ बजेसे।
दशमी अहोरात्र	सोम	रेवती " ३।४१ बजेतक	१५ "	भद्रा सायं ४।१५ बजेसे, मेषराशि रात्रिमें ३।४१ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ३।४१ बजे, मिथुन- संक्रान्ति प्रातः ६।३८ बजे।
दशमी प्रातः ५।१६ बजेतक	मंगल	अश्वनी अहोरात्र	१६ "	भद्रा प्रातः ५।१६ बजेतक।
एकादशी दिन ७।१४ बजेतक	बुध	अश्वनी प्रातः ६।१५ बजेतक	१७ "	योगिनी एकादशीव्रत (सबका), मूल प्रातः ६।१५ बजेतक।
द्वादशी " ८।५७ बजेतक	गुरु	भरणी दिनमें ८।३६ बजेतक	१८ "	वृषराशि दिनमें ३।५ बजेसे, प्रदोषव्रत।
त्रयोदशी " १०।१९ बजेतक	शुक्र	कृत्तिका " १०।३५ बजेतक	१९ "	भद्रा दिनमें १०।१९ बजेसे रात्रिमें १०।४६ बजेतक।
चतुर्दशी " ११।१३ बजेतक	शनि	रोहिणी " १२।८ बजेतक	२० "	श्राद्धादिकी अमावस्या, मिथुनराशि रात्रिमें १२।४१ बजेसे।
अमावस्या " ११।३९ बजेतक	रवि	मृगशिरा " १।१३ बजेतक	२१ "	अमावस्या, सूर्यग्रहण, भारतमें— प्रारम्भ—दिनमें ९।५७ बजे एवं मोक्ष दिनमें २।२९ बजे।

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा दिनमें ११।३३ बजेतक	सोम	आर्द्रा दिनमें १।४७ बजेतक	२२ जून	आर्द्रा में सूर्य प्रातः ७।११ बजे।
द्वितीया " १०।५७ बजेतक	मंगल	पुनर्वसु " १।५२ बजेतक	२३ "	कर्कराशि दिनमें ७।५० बजेसे, श्रीजगदीशरथयात्रा।
तृतीया " ९।५२ बजेतक	बुध	पुष्य " १।२८ बजेतक	२४ "	भद्रा रात्रिमें ९।८ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल दिनमें १।२८ बजेसे।
चतुर्थी " ८।२४ बजेतक	गुरु	आश्लेषा " १२।४३ बजेतक	२५ "	भद्रा दिनमें ८।२४ बजेतक, सिंहाराशि दिनमें १२।४३ बजेसे।
पंचमी प्रातः ६।३४ बजेतक	शुक्र	मघा " ११।३७ बजेतक	२६ "	मूल दिनमें ११।३७ बजेतक।
सप्तमी रात्रिमें २।९ बजेतक	शनि	पू०फा० " १०।१५ बजेतक	२७ "	भद्रा रात्रिमें २।९ बजेसे, कन्याराशि दिनमें ३।५३ बजेसे।
अष्टमी " ११।४२ बजेतक	रवि	उ०फा० " ८।४२ बजेतक	२८ "	भद्रा दिनमें १२।५५ बजेतक।
नवमी " ९।१२ बजेतक	सोम	हस्त प्रातः ७।४ बजेतक	२९ "	तुलाराशि सायं ६।१४ बजेसे।
दशमी सायं ६।४६ बजेतक	मंगल	चित्रा प्रातः ५।२३ बजेतक	३० "	× × × ×
एकादशी दिन ४।२४ बजेतक	बुध	विशाखा रात्रिमें २।१९ बजेतक	१ जुलाई	भद्रा प्रातः ५।३५ बजेसे दिनमें ४।२४ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें ८।४२ बजेसे, श्रीहरिशयनी एकादशीव्रत (सबका)।
द्वादशी " २।१५ बजेतक	गुरु	अनुराधा " १।५ बजेतक	२ "	प्रदोषव्रत, मूल रात्रिमें १।५ बजेसे।
त्रयोदशी " १२।२१ बजेतक	शुक्र	ज्येष्ठा " १२।११ बजेतक	३ "	धनुराशि रात्रिमें १२।११ बजेसे।
चतुर्दशी " १०।४८ बजेतक	शनि	मूल " ११।३६ बजेतक	४ "	भद्रा दिनमें १०।४८ बजेसे रात्रिमें १०।१२ बजेतक, व्रत-पूर्णिमा, मूल रात्रिमें ११।३६ बजेतक।
पूर्णिमा " ९।३८ बजेतक	रवि	पू०षा० " ११।२६ बजेतक	५ "	पूर्णिमा, गुरुपूर्णिमा।

कृपानुभूति

दैवी कृपाका आभास

मुझे अपने मित्रके आग्रहपर अपने गाँवसे कोई २० कि०मी०की दूरीपर अवस्थित रणिया गाँव पहुँचना था। यह गाँव भयंकर जंगल और पर्वतीय क्षेत्रमें स्थित था। मैं प्रातः स्नान, ध्यान और पूजा-पाठसे निवृत्त हो, भोजन करनेके पश्चात् घरसे निकल पड़ा। गाँव जानेका मार्ग कच्चा, धूलभरा, झाड़-झंकाड़युक्त और पथरीला था। इस मार्गपर पहले मैं दो-तीन बार आ-जा चुका था। मैं पैदल ही सफरमें निर्द्वन्द्व आगे बढ़ता गया। बहुत चलनेके पश्चात् मुझे लगा कि मैं निर्दिष्ट स्थानसे बहुत आगे निकल चुका हूँ। कदाचित् मैं रास्ता चूक गया हूँ; क्योंकि चलते-चलते दोपहर ढलनेको हो गया, इतना समय वहाँ पहुँचनेमें मुझे कभी नहीं लगा। मैं लगातार चलनेसे कुछ थकान भी महसूस करने लगा। कुछ देर विश्रामके पश्चात् फिर चलनेको उद्यत हुआ। उस मार्गपर लोगोंका आवागमन भी नहीं-के बराबर था। मैं पूछूँ तो किससे पूछूँ कि रणिया गाँव यहाँसे कितना दूर है, किस ओर है। विवश हो मैं बिना रुके आगे बढ़ता ही गया। मैं यह भी एहसास नहीं कर पाया कि मैं किस दिशामें चल रहा हूँ। मुझे दिशा-भ्रम हो गया था। आगे बढ़नेपर मुझे गहरी घाटी मिली, मैं उस घाटीकी ढलानसे नीचे उतरने लगा और देखा कि सामनेके पर्वतोंपर विशाल वृक्षोंकी झुरमुटोंपर डूबते सूर्यका हलका-सा प्रकाश छितरा रहा है। लगभग सन्ध्या होनेको आयी थी। वीरान जंगलका अंचल धुँधलाने लगा। मैं निरुपाय आगे बढ़ता ही जा रहा था। उसी समय अचानक मुझे कुछ दूरीपर ढोल बजनेकी आवाज सुनायी दी। मुझे तसल्ली हुई कि अति निकट ही कोई गाँव है, जहाँ ढोल बज रहा है। यह आवाज थोड़े-थोड़े अन्तरालसे आ रही थी और मुझे विश्वास दिला रही थी कि मैं अब इस आवाजके सहारे सम्भावित गाँवमें पहुँचकर सुरक्षित रात्रि व्यतीत कर लूँगा। उसी समय घाटीपर नीचेसे ऊपरकी ओर बढ़ती हुई एक वयोवृद्ध महिला (वनवासी) मेरे निकटसे गुजरी। ज्यों ही वह मेरे समानान्तर आयी, उसने

अपने हाथके इशारेसे मुझे पुनः लौट जानेका संकेत किया और अपनी ग्रामीण भाषामें मुझे कुछ कहती हुई आगे बढ़ गयी। वह तेजीसे भागी हुई घाटी चढ़ रही थी। उसकी भाषा नहीं समझ पानेसे मैंने उसके कथनपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और घाटीसे नीचे उतरता ही गया। उसके दो शब्द अवश्य मेरे पल्ले पड़े—‘जानवर’ और ‘बोलना’। कुछ ही समय पश्चात् मुझमें दैवीय प्रेरणा जाग्रत् हुई और उस भागी जा रही महिलाके कथनपर मेरा ध्यान केन्द्रित हुआ। वह कह रही थी ‘तुम इस समय इधर कहाँ जा रहे हो? वापस मुड़ चलो, आगे मत बढ़ो, सुनते नहीं जानवर बोल रहा है।’ उसने जानवर शब्दका प्रयोग शेरके लिये किया। वह थोड़ी-थोड़ी देरमें आनेवाली आवाज ढोलकी नहीं, बल्कि शेरके दहाड़नेकी थी। जब शेरको पूरी खुराक नहीं मिलती है तो वह सन्ध्या समय दहाड़ मारता है। उस समय शेर ही दहाड़ रहा था, जिसे मैं भ्रमवश ढोल बजनेकी आवाज समझ रहा था। पहाड़ोंमें शेरके दहाड़ने की आवाज, ढोल बजने-जैसी ही ज्ञात होती है। मुझे ज्यों ही सुध आयी, फुर्तीसे मुड़ा और बड़े वेगसे घाटीपर चढ़ गया। कुछ आगे बढ़नेपर मुझे दो वनवासी लोग मिल गये। उन्होंने मुझे टोका, ‘भाई, इस समय तुम इधर कहाँसे आ रहे हो?’ मैं स्तब्ध हो गया और उनसे कुछ भी कहनेका साहस नहीं कर पाया। उन्हें मैं क्या उत्तर देता? उन्होंने मेरे साथ काफी सहानुभूति बरती, मुझे ढाढ़स दिया और समीपके गाँवमें अपने घर ले गये। वहीं रात्रि व्यतीत की। दूसरे दिन रणिया गाँव पहुँचकर अपने कार्यसे निवृत्त हो, सकुशल अपने गाँव लौटा।

मुझे आभास हुआ कि मेरी आराध्य देवी आशापुराने वनवासी वृद्ध महिलाका रूपधर उस वीरान जंगलमें मुझे भारी संकटसे उबारा और मृत्युके मुँहमें जानेसे रोका। उनकी असीम कृपाने ही मुझे सुरक्षित घर लौटाया, अन्यथा उस रात तो मैं शेरके मुखका निवाला हो गया होता।—जयसिंह चौहान ‘जौहरी’

पढ़ो, समझो और करो

(१)

अपरिचित रेलकर्मियोंकी सद्भावना

उन दिनों मैं ब्रिटेनके कार्डिफ विश्वविद्यालयमें पत्रकारितामें पी-एच.डी. कर रहा था। इसके लिये मुझे ब्रिटिश सरकारने स्कालरशिप दी थी।

जनवरी, १९९१ ई०की बात है। उस समय ब्रिटेनमें कड़ाकेकी ठंड थी। कुछ दिनों पहले बर्फबारी हुई थी। तेज हवाएँ चल रहीं थीं। इस कारण ठंड और भी बढ़ गयी थी। मैं अपने पी-एच.डी. शोधकार्यके सिलसिलेमें सबेरे कार्डिफसे लंदन आया था। परंतु अपना कोट कार्डिफमें ही भूल गया था और एटीएम कार्ड भी भूल गया था। दिन तो जैसे-तैसे गुजर गया, परन्तु रात में ठंड बहुत हो गयी। रातमें जब लंदनसे कार्डिफ वापस जाने लगा, तब मुझे पता चला कि कार्डिफ जानेवाली आखिरी ट्रेन लंदनसे जा चुकी है। तब मेरे सामने समस्या खड़ी हो गयी कि जेबमें पर्याप्त पैसे भी नहीं हैं और उस भयंकर जाड़ेमें रात स्टेशनपर कैसे काटी जाय ?

लंदनमें पैडिंगटन स्टेशनसे मुझे कार्डिफकी ट्रेन पकड़नी थी। रातके कोई आठ बजे होंगे। स्टेशनपर घना कोहरा छाया हुआ था। सब तरफ सन्नाटा था। वहाँ रातमें स्टेशनोंपर सन्नाटा हो जाता है। बड़ी मुश्किलसे मुझे एक रेलका कर्मचारी दिखायी पड़ा। मैंने उससे पूछा, 'मुझे कार्डिफ जाना है। कौन-सी ट्रेन जायगी ?'

'लास्ट ट्रेन टु कार्डिफ हैज गॉन' (कार्डिफ जानेवाली आखिरी ट्रेन जा चुकी है), उसने बताया कि अगली ट्रेन तो सुबह ही जायगी।

अब मेरे सामने संकट खड़ा हो गया कि रात कहाँ गुजारी जाय ? कोटके बिना खूब जाड़ा लग रहा था। जेबमें इतने ज्यादा पैसे भी नहीं थे कि किसी होटल (बेड एंड ब्रेकफास्ट)-में जाकर रुक जाऊँ।

मैंने स्टेशनपर किसी आदमीको ढूँढ़कर पूछा, 'यहाँ कोई वेटिंग-रूम (यात्री प्रतीक्षालय) है ?'

'वेटिंग-रूममें तो मरम्मत चल रही है।'

उसने सुझाव दिया कि मैं स्टेशनके खम्भेके किनारे बैठकर रात गुजार दूँ और सुबह ट्रेन पकड़कर कार्डिफ चला जाऊँ।

मैंने कहा, 'इस तरहसे बैठनेमें तो मेरी कुल्फी बन जायगी।'

वह मेरी समस्या सुलझा नहीं सका।

तब मैं पैडिंगटन स्टेशनकी पुलिस चौकीपर गया कि शायद वे मेरी समस्याका कुछ हल निकाल सकें। परंतु वहाँपर एक आदमी नशेमें धुत खड़ा था और उसका पुलिसवालेसे झगड़ा हो रहा था। इस कारण मैं वहाँसे भी खिसक लिया; क्योंकि मुझे लगा कि वातावरण बहुत तनावपूर्ण है और मेरी सुनवाई नहीं हो पायेगी।

इंग्लैंडकी पुलिससे मददकी उम्मीद कर सकते हैं, लेकिन मुझे मदद नहीं मिली।

अचानक मुझे रॉयल मेल (ब्रिटेनके पोस्ट-आफिस)-की एक लाल रंगकी वैन स्टेशनपर खड़ी दिखी। उसके ड्राइवरके पास मैं गया और उसको अपनी राम-कहानी सुनायी।

ड्राइवरने सुझाव दिया कि सामने जो ट्रेन खड़ी है, उसमें जाकर मैं बैठ जाऊँ। उस ट्रेनके डिब्बोंमें हीटिंगकी व्यवस्था है। अर्थात् सभी डिब्बोंमें पर्याप्त गर्मी है और वह ट्रेन ब्रिस्टल पार्क-वे तक जा रही है। कार्डिफ स्टेशन ब्रिस्टल पार्क-वेके बाद पड़ता है। उसने सुझाव दिया कि मैं ब्रिस्टल पार्क-वेतक उस ट्रेनसे चला जाऊँ और वहाँपर कोई-न-कोई वेटिंग-रूम जरूर होगा। उस वेटिंग-रूममें रात गुजारूँ और सबेरे वहाँसे ट्रेन पकड़कर कार्डिफ चला जाऊँ।

मुझे उसका सुझाव बड़ा व्यावहारिक लगा और मैं ट्रेनमें जाकर बैठ गया। बैठते ही जाड़ेसे मुक्ति मिलने लगी। ट्रेन लगभग खाली थी।

थोड़ी देर बाद टी.टी.ई. आया मेरे पास। उसको फिर मैंने अपनी रामकहानी सुनायी। मेरी समस्याको

इस घटनासे पाठकगण त्यागकी असीम शक्तिका अनुमान भलीभाँति लगा सकते हैं।—आर० एन० लाल

मनन करने योग्य

माता-पिताकी सेवा ही परम धर्म है



महाभारतमें एक कथा है कि कौशिक नामक एक ब्राह्मण बचपनमें घर छोड़कर साधु बन गया और उसने कठोर तपस्या की। तपके प्रभावसे उसे अद्भुत शक्ति प्राप्त हो गयी। एक बार वृक्षके नीचे अध्ययन कर रहे उसके शरीरपर एक पक्षीने विष्टा कर दी। जब उसने क्रुद्ध होकर पक्षीकी तरफ देखा तो उसके तपके प्रभावसे वह पक्षी जलकर भस्म हो गया।

तपके अहंकारसे चूर वह तपस्वी एक गृहस्थके यहाँ भिक्षा माँगनेके लिये गया। उस घरकी स्त्री अपने पतिकी सेवामें व्यस्त थी और साधुके बुलानेपर उसने कोई ध्यान नहीं दिया। पतिसेवासे निवृत्त होनेपर वह भिक्षा लेकर साधुके पास आयी और भिक्षा लेनेका आग्रह करने लगी। देर होनेके कारण साधु उसपर कुपित हो गया। इसपर वह पतिव्रता स्त्री बोली—महाराज! क्या मुझे आपने वह पक्षी समझ लिया है, जिसे जलाकर आये हैं? यह सुनकर उस साधुको बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने इस बातके जाननेका रहस्य उस स्त्रीसे पूछा। उस स्त्रीने साधुको बताया कि इस विषयमें मिथिलापुरी-निवासी धर्मव्याध उन्हें समझायेगा।

तदनन्तर साधु उस धर्मव्याधकी दूकानपर गया, जहाँ वह मांस-विक्रय कर रहा था।

धर्मव्याध साधु कौशिकको अपने घर ले गया। साधुने देखा कि वह धर्मव्याध जब घरमें आया तो माँ-बापकी सेवामें तत्पर हो गया। साधुने उसकी आजीविकाके बारेमें जब उससे पूछा तो उस धर्मव्याधने कहा—मैं दूसरेके द्वारा मारे गये जीवोंके मांसको बेचता हूँ। यह मेरी जीविकाका आधार है और मैं अपने अन्धे माँ-बापकी सेवा करता हूँ, जो मेरा सर्वोपरि कर्तव्य है। यह पूजा-पाठ, जप-तपसे महान् कार्य है। भगवन्! ये माता-पिता ही मेरे प्रधान देवता हैं, जो कुछ देवताओंके लिये करना चाहिये, वह मैं इन्हीं दोनोंके लिये करता हूँ। मैं स्त्री और पुत्रोंके साथ प्रतिदिन इन्हींकी शुश्रूषामें लगा रहता हूँ, इनकी सेवा ही मेरी तपस्या है, इन्हींकी कृपासे मुझे दिव्यदृष्टि और धर्मका सारा रहस्य मालूम है। इन्हींकी कृपासे पक्षीको भस्म कर देने तथा पतिव्रताद्वारा मेरे पास भेजने आदिका समाचार सब मुझे पहले ही ज्ञात हो गया था।

हे साधो! मेरा तो यही दृढ़ निश्चय है कि माता-पिता, गुरु तथा सभी बड़े जनोंकी प्रयत्नपूर्वक सेवा करनी चाहिये। हे द्विजश्रेष्ठ! आपने अपने माता-पिताकी उपेक्षा की है, वेदाध्ययनके लिये आप उन दोनोंकी आज्ञा लिये बिना घरसे निकल पड़े, आपके द्वारा यह अनुचित कार्य हुआ है, आपके शोकसे वे दोनों बूढ़े एवं तपस्वी माता-पिता अन्धे हो गये हैं। अब आप उन्हें प्रसन्न करनेके लिये घर जाइये और उनकी सेवा कीजिये। आप अपने माँ-बापको छोड़कर साधु बन गये हैं और अपने कर्तव्यको भूल गये हैं। माँ-बापकी सेवा परम धर्म है। यही कारण है कि मैं और वह पतिव्रता स्त्री पक्षीको जलानेकी घटनाका रहस्य समझ गये। साधुने जब उस धर्मव्याधकी बात सुनी तो उसे अपने कर्तव्यका ज्ञान हो गया।

—प्रो० श्रीमुखलालजी राय

कल्याणका आगामी ९५वें वर्ष (सन् २०२१ ई०)-का विशेषाङ्क

‘ श्रीगणेशपुराणाङ्क ’

[श्लोकाङ्कसहित सम्पूर्ण हिन्दी भाषानुवाद]

नमामि देवं द्विरदानं तं यः सर्वविघ्नं हरते जनानाम्।
धर्मार्थकामास्तनुतेऽखिलानां तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ॥

‘मैं उन भगवान् गजानन गणेशजीको प्रणाम करता हूँ, जो लोगोंके सम्पूर्ण विघ्नोंका हरण करते हैं, जो सबके लिये धर्म, अर्थ और कामकी उपलब्धि कराते हैं, उन विघ्नविनाशकको नमस्कार है।’

शास्त्रोंमें भगवान्के सच्चिदानन्दमय पाँच मुख्य विग्रह माने गये हैं। ये सभी विग्रह अनादि, अनन्त एवं परात्पर हैं; सभीके भिन्न-भिन्न लोक हैं, जो चिन्मय एवं शाश्वत हैं। सबके अलग-अलग स्वरूप हैं, अलग-अलग शक्तियाँ हैं, आयुध हैं, वाहन हैं, पार्षद हैं, सेवक हैं, सेवाके विविध प्रकार हैं तथा उपासना एवं अर्चाकी विविध पद्धतियाँ हैं। ये सभी स्वरूप पूर्ण हैं—लीलाक्रमसे ही उनमें परस्पर मुख्यता एवं गौणता दृष्टिगोचर होती है। ये पाँच स्वरूप हैं—शिव, शक्ति, विष्णु, गणेश और सूर्य। इन पाँच देवोंकी एक साथ भी उपासना होती है और पृथक्-पृथक् भी। पाँच भगवद्विग्रहोंमें-से भगवान् शिवसे सम्बन्धित ‘श्रीशिवमहापुराण’, शक्तिसे सम्बन्धित ‘श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण’ तथा भगवान् विष्णुसे सम्बन्धित ‘श्रीविष्णुपुराण’ का प्रकाशन गीताप्रेसद्वारा कल्याणके विशेषांकोंके रूपमें हो चुका है। भगवान् विष्णुके ही अवतार श्रीराम और श्रीकृष्णसे सम्बन्धित ‘मानसाङ्क’, ‘वाल्मीकीय रामायण’ और ‘भागवतांक’ का प्रकाशन भी कल्याणके विशेषाङ्कोंके रूपमें हो चुका है। भगवान् गणेश प्रथम पूज्य हैं, परंतु इनकी अर्चनासे सम्बन्धित किसी विशेष ग्रन्थका गीताप्रेससे प्रकाशन नहीं हो सका था। इस सन्दर्भमें देशके विभिन्न प्रान्तोंके सन्तों, आचार्यों और गणपति भक्तोंके पत्र आते रहे, अतः यह निर्णय लिया गया कि कल्याणका आगामी ९५वें वर्ष (सन् २०२१)-का विशेषाङ्क ‘श्रीगणेशपुराणाङ्क’ के रूपमें प्रकाशित किया जाय, जिससे इस महती कमीकी पूर्ति की जा सके।

‘श्रीगणेशपुराण’ गणपति-उपासनाका प्रतिनिधि ग्रन्थ है। यह पुराण उपासनाखण्ड और क्रीडाखण्ड नामक दो खण्डोंसे समन्वित है। प्रथम—उपासनाखण्डमें ९२ अध्याय और ४१२१ श्लोक हैं तथा द्वितीय—क्रीडाखण्डमें ११५ अध्याय और ७०६८ श्लोक हैं। इस प्रकार यह सम्पूर्ण पुराण १११८९ श्लोकोंमें निबद्ध है।

गणेशपुराणकी गणना उपपुराणोंमें प्रथम उपपुराणके रूपमें होती है। यद्यपि इस पुराणकी गणना उपपुराणोंमें होती है, परंतु गणपति भक्त इसे ‘गणेश-भागवत’ कहकर भागवतमहापुराण-सदृश आदर देते हैं। जैसे महाभारतमें विष्णुसहस्रनाम और श्रीमद्भगवद्गीता सन्निहित है, वैसे ही इसके उपासनाखण्डमें गणपतिसहस्रनामस्तोत्र और क्रीडाखण्डमें ‘गणेशगीता’ सन्निहित है, जिसे स्वयं भगवान् गणेशने राजा वरेण्यको सुनायी थी। उपासनाखण्डमें गणेशजीकी उपासनासे सम्बन्धित गणेशचतुर्थी, संकष्टचतुर्थी, अङ्गारकचतुर्थी, वरदचतुर्थी आदि व्रतोंकी कथाएँ और उनका विधान वर्णित है। गणेशपूजनमें दूर्वा-समर्पणका महत्त्व तथा भाद्रशुक्ल चतुर्थीको चन्द्र-दर्शनके निषेधकी कथाएँ भी इसमें समाहित हैं। भगवान् शिवका पार्थिव-पूजन प्रसिद्ध है, उसी प्रकार

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

गणेशजीकी भी एकसे लेकर १०८ पार्थिव प्रतिमाओंके पूजनका विधान और फल भी वर्णित है। इस खण्डमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव, पार्वती, स्कन्द, चन्द्रमा, मंगलग्रह, कश्यप, परशुराम, शेषनाग, कामदेव, महर्षि व्यास, भ्रूशुण्डी, मुद्गल, राजा कर्दम, नल, चन्द्रांगद, शूरसेन, वरेण्य, दक्ष, बल्लाल आदि देवताओं, ऋषि-मुनियों, राजाओं और गणेश-भक्तोंद्वारा की गयी उनकी उपासनाकी कथाएँ भी सम्मिलित हैं।

क्रीडाखण्डमें भगवान् गणेशकी बाल-लीलाओंका वर्णन है। उन परमात्मप्रभुके महोत्कट विनायक, मयूरेश्वर और गजानन अवतारों तथा कलियुगमें होनेवाले धूम्रकेतु अवतारका इस खण्डमें वर्णन है। इन अवतारोंमें उनके द्वारा नरान्तक, देवान्तक, गृध्रासुर, क्रूरासुर, व्योमासुर, शतमाहिषा, वृकासुर, कमलासुर, सिन्धु और सिन्दूरासुर आदि अनेक असुरोंका उद्धार हुआ। उनकी कथाएँ इस खण्डमें वर्णित हैं। इस प्रकार यह सम्पूर्ण पुराण रोचक एवं भक्तिपरक लीलाकथाओंसे परिपूर्ण है।

इस पुराणका सर्वप्रथम कथन ब्रह्माजीने भृगुमुनिसे किया था, भृगुमुनिने इस पुराणको कृपापूर्वक राजा सोमकान्तको सुनाया। इस प्रकार इस पुण्यप्रद गणेशपुराणका पृथ्वीपर प्रचलन हुआ। यद्यपि इस पुराणके आदि, मध्य और अन्तमें—सर्वत्र श्रीगणेशतत्त्वका ही प्रतिपादन हुआ है, परंतु यह पुराण शैव, वैष्णव, शाक्त, सौर और गाणपत्य—सभीके लिये पठनीय है; क्योंकि भगवान् गणेश तो प्रथम पूज्य हैं और किसी भी देवी-देवताके पूजनसे पहले उनका पूजन अनिवार्य है। इस सम्बन्धमें भगवान् शिवका कथन है—

शैवैस्त्वदीयैरथ वैष्णवैश्च शाक्तैश्च सौरैरथ सर्वकार्ये ॥

शुभाशुभे वैदिकलौकिके वा त्वमर्चनीयः प्रथमं प्रयत्नात् ।

[गणेशपू० १।४५।१०-११]

अर्थात् हे ईश! शैव, आपके भक्त (गणेश-उपासक), वैष्णव, शाक्त और सूर्योपासक—सभीके सम्पूर्ण कार्योंमें, चाहे वे वैदिक हों या लौकिक, शुभ हों या अशुभ—सभी कार्योंमें आप ही प्रयत्नपूर्वक प्रथम पूजनीय हैं।

इस पुराणकी महिमाके विषयमें कहा गया है कि जो व्यक्ति इस श्रेष्ठ गणेशपुराणका श्रवण करता है, वह सभी आपत्तियोंसे मुक्त होकर अनेक भोगोंका उपभोग करके, पुत्र-पौत्रादिसे सम्पन्न होकर ज्ञान-विज्ञानसे समन्वित हो जाता है और गणेशजीकी कृपासे उत्तम मुक्ति प्राप्त करता है। सैकड़ों करोड़ कल्प बीत जानेपर भी उसका [इस संसारमें] पुनरागमन नहीं होता।

शृणुयाद् यो गणेशस्य पुराणमिदमुत्तमम् । स सर्वामापदं हित्वा भुक्त्वा भोगाननेकशः ॥

पुत्रपौत्रसमायुक्तो ज्ञानविज्ञानसंयुतः । लभते परमां मुक्तिं गणेशस्य प्रसादतः ॥

न तस्य पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि ।

[गणेशपू० १।९२।५७—५८^{१/२}]

इस विशेषाङ्कमें केवल श्रीगणेशपुराणका भाषानुवाद ही श्लोकसंख्याके साथ दिया जायगा, अतः लेखक महानुभावोंसे सादर अनुरोध है कि वे इस विशेषाङ्कमें प्रकाशनार्थ लेख भेजनेका कष्ट न करें, परंतु गणेशपुराणसम्बन्धी कोई विशिष्ट लेख हो तो उसे आगे साधारण अङ्कोंमें देनेका विचार किया जा सकता है।

विनीत—

राधेश्याम खेमका

पाठकोंसे निवेदन

आजकल भारतीय टेलीविजनपर हमारे धार्मिक ग्रन्थोंमें वर्णित देवी-देवताओंके चरित्रोंके आधारपर जो रामायण, महाभारत, विष्णुपुराण, श्रीकृष्ण, जय हनुमान्, देवोंके देव महादेव, जय गणेश आदि धारावाहिक दिखाये जा रहे हैं उनसे सम्बन्धित प्रामाणिक मूल ग्रन्थ गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित हैं।

हम सबका दायित्व है कि भावी पीढ़ियोंको देवी-देवताओं, ऋषि-मुनियों और भक्तोंके सम्बन्धमें प्रामाणिक जानकारीके लिये गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित मूल ग्रन्थों एवं सत्साहित्यको पढ़नेके लिये प्रेरित करें।

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (कोड 75, 76) ग्रन्थाकार—प्रस्तुत ग्रन्थमें भगवान्के लोकपावन चरित्रकी सर्वप्रथम वाङ्मयी परिक्रमा है। मूलके साथ सरस हिन्दी अनुवादमें दो खण्डोंमें उपलब्ध, सचित्र, सजिल्द। मूल्य ₹ 600 (कोड 1557, 1622, 1745) तेलुगु, (कोड 1964, 1965, 1969) कन्नड़, (1939, 1940) गुजराती, (कोड 2034, 2195) बँगला, (कोड 1902, 1903, 1904, 1905, 1906) तमिलमें भी उपलब्ध।

अध्यात्मरामायण (कोड 74) ग्रन्थाकार—यह परम पवित्र गाथा भगवान् शङ्करद्वारा आदिशक्ति जगदम्बा पार्वतीजीको सुनायी गयी थी। इसमें भक्ति, ज्ञान एवं अध्यात्म-तत्त्वके विवेचनकी प्रधानता है। मूल्य ₹ 110 (कोड 1508) मराठी, (कोड 1256) तमिल, (कोड 1558) कन्नड़ एवं (कोड 845) तेलुगुमें भी उपलब्ध।

श्रीरामचरितमानस (कोड 81)—गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराजके द्वारा प्रणीत श्रीरामचरितमानस हिन्दी साहित्यकी सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसके बृहदाकार, ग्रन्थाकार, मझला आकार, गुटका आकार और अलग-अलग काण्डके रूपमें विभिन्न भाषाओंमें सटीक एवं मूल अनेक संस्करण प्रकाशित किये गये हैं। मूल्य ₹ 300

कृतिवासी रामायण [ग्रन्थाकार, बँगला] (कोड 1839)—बंग-भाषाके आदि कवि संत कृतिवास प्रणीत इस ग्रन्थमें भगवान् नारायणके चार अंशोंका मनोरम चित्रण किया गया है। भगवान् रामके द्वारा की गयी शक्तिपूजाका सर्वप्रथम वर्णन कृतिवास रामायणमें मिलता है। प्रस्तुत ग्रन्थमें मध्यकालीन बंगाली समाज और संस्कृतिका विविध चित्रण बहुत ही सुन्दर, सरस और सरल शब्दोंमें किया गया है। मूल्य ₹ 180

महाभारत [सटीक] (कोड 728) ग्रन्थाकार—छः खण्डोंमें सेट—महाभारत भारतीय संस्कृतिका, आर्य सनातन-धर्मका अद्भुत महाग्रन्थ है। इसे 'पंचम वेद' भी कहा जाता है। यह महाग्रन्थ अनन्त गूढ़, गुह्य रत्नोंका भण्डार है। मूल्य ₹ 2250 (कोड 39, 511) केवल भाषा (कोड 2141, 2142, 2143, 2144, 2145, 2146, 2147) तेलुगुमें भी उपलब्ध।

श्रीविष्णुपुराण [सानुवाद] (कोड 48) ग्रन्थाकार—श्रीपराशर ऋषि-प्रणीत इस ग्रन्थमें सम्पूर्ण धर्म एवं देवर्षि तथा राजर्षियोंके चरित्रका विशद वर्णन है। मूल्य ₹ 150 (कोड 1364) केवल हिन्दी अनुवादमें मूल्य ₹ 120, (कोड 2040) बँगला, (कोड 2006) गुजराती, (कोड 2196) तमिलमें भी उपलब्ध।

संक्षिप्त शिवपुराण [मोटा टाइप] (कोड 789) ग्रन्थाकार—इस पुराणमें परात्पर ब्रह्म शिवके कल्याणकारी स्वरूपका तात्त्विक विवेचन, रहस्य, महिमा और उपासनाका विस्तृत वर्णन है। इसमें शिव-महिमा, लीला-कथाओंके अतिरिक्त पूजा-पद्धति, अनेक ज्ञानप्रद आख्यान और शिक्षाप्रद कथाओंका सुन्दर संयोजन किया गया है। मूल्य ₹ 250, विशिष्ट संस्करण (कोड 1468) मूल्य ₹ 300, (कोड 2020) मूलमात्रम् मूल्य ₹ 275 (कोड 2223, 2224) सटीक। मूल्य ₹ 650 एवं (कोड 1286) गुजराती, (कोड 1937) बँगला, (कोड 1926) कन्नड़, (कोड 975) तेलुगु, (कोड 2043) तमिलमें भी उपलब्ध।

श्रीगणेश-अङ्क (कोड 657) ग्रन्थाकार—प्रस्तुत अङ्कमें श्रीगणेशकी लीला-कथाओंका भी बड़ा ही रोचक वर्णन और पूजा-अर्चना आदिपर उपयोगी दिग्दर्शन है। मूल्य ₹ 180

श्रीहनुमान-अङ्क (कोड 42) ग्रन्थाकार—इस अङ्कमें श्रीहनुमान्जीको प्रसन्न करनेवाले विविध स्तोत्र, ध्यान एवं पूजन-विधियोंका भी संकलन है। मूल्य ₹ 150



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



KAPWING

नवीन प्रकाशन—अब उपलब्ध

श्रीगर्गसंहिता-सटीक [कोड 2260]—श्रीकृष्णके कुलगुरु महर्षि गर्गद्वारा रचित इस संहिताकी कथाएँ समस्त वैष्णव-परम्परा में सर्वाधिक प्रामाणिक मानी जाती हैं। यह सारी संहिता अत्यन्त मधुर श्रीकृष्णलीलासे परिपूर्ण है। श्रीराधाकी दिव्य माधुर्यभावमिश्रित लीलाओंका इसमें विशद वर्णन है। इसमें गोलोक, वृन्दावन, गिरिराज, माधुर्य, मथुरा, द्वारका, विश्वजित्, बलभद्र, विज्ञान एवं अश्वमेधसहित कुल 10 खण्ड हैं। गर्गसंहितामें और भी बहुत-सी ऐसी नयी-नयी कथाएँ हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। श्रीकृष्णभक्तोंके लिये यह ग्रंथ संग्रहणीय है। इस ग्रन्थको मूल श्लोकोंके साथ प्रकाशित किया गया है। मूल्य ₹ 350

योग एवं आरोग्यपर तीन प्रमुख प्रकाशन—अब उपलब्ध

पातञ्जलयोग-प्रदीप (कोड 47) ग्रन्थाकार—श्रद्धेय श्रीओमानन्द महाराजद्वारा प्रणीत इस ग्रन्थमें पातञ्जलयोग-सूत्रोंकी व्याख्या तत्त्ववैशारदी, भोजवृत्ति तथा योगवार्तिकके अनुसार विस्तृत रूपसे की गयी है। इसमें उपनिषदों तथा भारतीय दर्शनोंके विभिन्न तत्त्वोंकी सुन्दर समालोचना है। मूल्य ₹ 200

योगाङ्क (कोड 616) ग्रन्थाकार—इसमें योगकी व्याख्या तथा योगका स्वरूप-परिचय एवं प्रकार और योग-प्रणालियों तथा अङ्ग-उपाङ्गोंपर विस्तारसे प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त इसमें अनेक योगसिद्ध महात्माओं और योग-साधकोंके जीवन-चरित्रका वर्णन है। मूल्य ₹ 280

आरोग्य-अङ्क [संवर्धित संस्करण] (कोड 1592) ग्रन्थाकार—विभिन्न चिकित्सा-पद्धतियों, घरेलू औषधियों तथा स्वास्थ्यरक्षार पर संगृहीत अनेक उपयोगी लेखोंका संग्रह है। मूल्य ₹ 260

पाठकोंके लिये आवश्यक सूचना

1. 'कल्याण' एवं 'गीताप्रेस-पुस्तक-बिक्री-विभाग' की व्यवस्था अलग-अलग है। अतः केवल कल्याणके लिये कल्याण विभागको एवं पुस्तकोंके लिये पुस्तक-बिक्री-विभागको पत्र तथा मनीऑर्डर आदि अलग-अलग भेजना चाहिये। पुस्तकोंके ऑर्डर, डिस्पैच अथवा मूल्य आदिकी जानकारीके लिये पुस्तक प्रचार-विभागके फोन (0551) 2331250, 2331251, 2334721 नम्बरोंपर सम्पर्क करें।

2. कल्याणके पाठकोंकी सुविधाके लिये कल्याण-कार्यालयमें दो फोन 09235400242/09235400244 उपलब्ध हैं। इन नम्बरोंपर प्रत्येक कार्य-दिवसमें दिनमें 9:30 बजेसे 5.30 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं अथवा kalyan@gitapress.org पर e-mail भेज सकते हैं। इसके अतिरिक्त नं० 9648916010 पर SMS एवं WhatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।

3. पत्रमें अपना मोबाइल नम्बर तथा ग्राहकसंख्या अवश्य लिखें जिससे आपकी समस्याका निस्तारण शीघ्र किया जा सके।



booksales@gitapress.org

थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें।



gitapress.org

सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।

कूरियर/डाकसे मँगवानेके लिये

गीताप्रेस, गोरखपुर, 273005

book.gitapress.org

gitapressbookshop.in

कल्याणके मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ सकते हैं।